द्वितीय अध्याय

'विवेच्य नाटकों का विषयगत विवेचन'

द्वितीय अध्याय

"विवेच्य नाटकों का विषयगत विवेचन

प्रास्ताविक --

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के कुल मिलाकर चार नाटक हैं --

1 अशोक ।

2 रेवा ।

3 देव और मानव ।

4 न्याय की रात ।

"अशोक " विद्यालंकार जी का पहला नाटक है ।यह सन 1932 में प्रकाशित हुआ । चंद्रगुप्त विद्यालंकार एक संवेदनशील लेखक हैं । वे अखंड , शक्तिशाली एकात्म भारत का सपना देखने वाले देशप्रेमी लेखक हैं । वे जानते थे कि विशालकाय भारत अपने लंबे इतिहास में कितनी ही बार विभाजित हुआ । इसके परिणाम भी भारतवासियों को भुगतने पड़े । इतिहास इसका साक्षी है कि भौगोलिक अनुकूलता होकर भी हमारा देश भावात्मक एकता और राष्ट्रीयता के अभाव में बहुत बार टूटा

जिन दिनों विद्यालंकार जी ने " अशोक " नाटक लिखा उन दिनों स्वतंत्रता का संग्राम चरमसीमा पा रहा था । उस समय भी वे देख रहे थे कि भारत एक होकर विदेशी शासन के विरूद्ध लड़ रहा है मगर अंदर ही अंदर प्रान्तीयता, धर्म, जाति , भाषा के नाम पर बिखर रहा है । इसी लिए उन्होंने इतिहास को आधार बनाकर अखंड शक्तिशाली राष्ट्र के लिए देश प्रेम, त्याग, सेवाभाव, एकता एवं अखंडता की संवेदना अपने " अशोक " नाटक में प्रकट की है ।

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का दूसरा नाटक है " रेवा " । यह सन 1938 में प्रकाशित हुआ। इसमें भारतीय सभ्यता और संस्कृति के विदेशों में हुए विस्तार की कहानी है । विद्यालंकार जी जानते हैं कि मानव चिंतन और मानव भावनाओं का परम्परागत रूप है – संस्कृति । इसमें विकास की एक अटूट और लंबी शृंखला है । इसलिए वे संस्कृति और सभ्यता का प्रचार–प्रसार आवश्यक समझते हैं । इस सांस्कृतिक विकास की लंबी शृंखला के साथ–साथ कुछ कुड़ा–करकट (सांस्कृतिक दोष, अंधविश्वास आदि) भी जमा हो सकता है, इस कुड़े–कबाड़ को वे दूर करना चाहते थे । विद्यालंकार जी भारत का नव-निर्माण करना चाहते थे । " रेवा " में वे राष्ट्रीय और सांस्कृतिक एकता को महत्त्व देते हैं । इसमें उन्होंने ऐतिहासिक आधार को चुना है । इस नाटक में वे भारतीय , सामाजिक , राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ और उनके संबंध में शासक और नागरिकों के कर्तव्य को स्पष्ट करते हैं ।

उनका तीसरा नाटक है " देव और मानव " । विद्यालंकार जी का यह नाटक अनुपलब्ध है । हिंदी नाटक कोश के अंतर्गत मिली जानकारी के अनुसार यह नाटक पौराणिक कोटि के अंतर्गत आता है । इसका प्रथम प्रकाशन सन 1955 में हुआ । आगे चलकर उन्होंने " न्याय की रात " नामक नाटक लिखा जो सन 1959 में प्रकाशित हुआ । इस नाटक में उन्होंने आजाद भारत के सामने उपस्थित अनेक समस्याओं के संदर्भ में अपनी संवेदना प्रकट की है । भारतीय समाज के कमजोर हृदय का अध्ययन उन्होंने किया है । राजनीतिक कमजोरियाँ, अर्थनीति संबंधि कमजोरियाँ, कार्यालयीन कमजोरियाँ , व्यक्तिगत कमजोरियाँ इन सब कमजोरियों के करण देश का विकास ठप्प होता चला जा रहा है क्योंकि हर कोई इसी कमजोरियें का फाय्दा उठाकर अपने स्वार्थ की पूर्ति कर रहा है । रिश्वत, खुशामद, भ्रष्टाचार आदि चीजें विदेशी शासन ने भारतीय समाज के हृदय में पक्की कर दी थीं । इसी कारण भारतीय शासनव्यवस्था भी कमजोर बन गई है । कानून तोड़कर भी सुरक्षित रूप से भाग निकलने की प्रवृत्ति समाज में बढ़ गई है । विद्यालंकार जी भारतीय समाज के हृदय में परिवर्तन लाना चाहते हैं । वे हृदय-परिवर्तन की स्थिति पर विश्वास रखते हैं । प्रान्तीयता, जातीयता तथा धर्म के नाम पर जनता को बहकानेवाले नेताओं के कारण सामान्य जनता को पहुँची ठेस की संवेदना उन्हें थी । वे स्वयं इसकी यातना भोग चुके हैं । भारत–पाक विभाजन के कारण उन्हें लाहौर (पाकिस्तान)छोड़कर दिल्ली (भारत) आना पड़ा । इस टिस को वे कभी भूल नहीं सके । इसी कारण भी उनके नाटकों में राष्ट्रीय एकता और अखंड़ता तथा भावात्मक एकता की संवेदना देखने को मिलती है ।

2·1 "अशोक "--

"अशोक " चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का प्रथम नाटक है, जो सन 1932 में प्रकाशित हुआ । यह ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया आदर्शप्रधान नाटक है । इतिहास को आधार बनाकर कल्पित प्रसंगों के आधार पर यह नाटक लिखा हुआ है । हिंसा और अहिंसा की चरमसीमा लाँघनेवाले सम्राट अशोक के मनोविज्ञान को यहाँ नाटककार ने प्रदर्शित किया है ।

भारत–सम्राट बिन्दुसार का मँझला पुत्र अशोक सम्राट बनने और सत्ताधिकार पाने की महत्त्वांकाक्षा हेतु पिता के मरने के बाद तक्षशिला के सैनिकों द्वारा पाटलिपुत्र पर आक्रमण करता है । अपने भाई सम्राट सुमन का राजकीय कारागार में बन्दी बनाकर सेनापति चंड़गिरी द्वारा बड़े छलपूर्वक वध किया जाता है ।

आगे चलकर अशोक की सत्तालोलुपता और भी बढ़ जाती है । वह सीमाप्रान्त से कलिंग पर आक्रमण कर देता है । भयानक युद्ध ,अन्याय, अत्याचार, मनुष्यहानि हो जाती है । आचार्य उपगुप्त के आदर्श विचार, उपदेश ,पत्नी तिष्यरक्षिता का महासाम्राज्य के लिए विरोध करना और आखिर उनकी भाभी और सम्राट सुमन की वाग्दत्ता पत्नी शीला का अपने पति के हत्यारे अशोक की जान की बाजी खेलकर प्राणरक्षा करना आदि घटनाओं के कारण सम्राट बौद्ध धर्म स्वीकार करता है । वह अहिंसा का पुजारी बनकर लोककल्याणार्थ सारी शक्ति लगाने और कभी–भी युद्ध न करने की शपथ लेता है । हिंसा और अहिंसा के चरमबिन्दु पर आंदोलित होनेवाले सम्राट अशोक की कथा नाटककार ने कल्पना के आधार पर रोचक और हृदयस्पर्शी बना ली है । अशोक के हृदयपरिवर्तन की कथा इस नाटक में चित्रित की है ।

2·1·1 कथावस्तु--

भारत–सम्राट बिन्दुसार के तीन पुत्र और एक पुत्री हैं । बड़ा बेटा पाटलिपुत्र का युवराज और भावी सम्राट है । दूसरा अशोक और तीसरा तिष्य तथा बेटी का नाम चित्रा है । युवराज सुमन बड़ा सहृदयी ,गम्भीर ,त्यागी ,सीधा तथा भ्रातृप्रेम से ओतप्रोत है । सुमन कर्तव्यशील राजकुमार है । वह राजनैतिक कर्तव्य को जी की चाह से ऊपर की चीज मानता है । उसे राज्य का मोह कदापि नहीं है । वह अपने भाईयों पर साथ ही प्रजा पर जी-जान से प्यार करता है । अशोक स्वभाव से अत्यन्त

निराला, कठोर, चंचल, तेज, महत्त्वाकांक्षी ,स्वार्थी , क्रियाशील एवं निपुण है । तीसरा बेटा तिष्य एकदम पृथक स्वभाव का है । उसका अपना संसार ही अलग है ।

सम्राट बिन्दुसार अब बूढ़े हो गये हैं । उनमें राज्य चलाने की शक्ति नहीं रही । इसलिए वे युवराज सुमन को पाटलिपुत्र का (मगध साम्राज्य का) सम्राट घोषित करते हैं । बिन्दुसार कहते हैं --" पुत्रों, होली के इस हर्षोत्सव में आज मैं अनुभव कर रहा हूँ कि मेरा हृदय प्रफुल्लीत नहीं है । मैं अब बूढ़ा हो गया हूँ । मेरी शक्तियाँ क्षीण पड़ गई हैं । कह नहीं सकता कि और कब तक मैं आपकी सेवा कर सकूँगा , इसीसे मैं चाहता हूँ कि आज इस शुभ अवसर पर युवराज सुमन को साम्राज्य के प्रधान सहकारी पद पर नियुक्त कर दूँ ।"[1] इसके बाद युवराज सुमन को बुलाकर सम्राट बिन्दुसार उसके माथे पर तिलक लगाते हैं । जनता "सम्राट चिरंजीवी हो । युवराज सुमन चिरंजीवी हों " का नारा लगाती है । युवराज सुमन मगध साम्राज्य के सम्राट बनाए जाते हैं ।

उसी प्रकार सीमाप्रान्त की राजधानी तक्षशिला में मगध साम्राज्य के विरूद्ध असंतोष फैल जाता है । तक्षशिला के नागरिक विद्रोह का झंडा खड़ा कर देते हैं । युवराज सुमन तक्षशिला के विद्रोह को शान्त करवाने के लिए अशोक को भेजना चाहते हैं । महत्त्वाकांक्षी अशोक तक्षशिला के विद्रोह को बच्चों का खिलवाड़ समझता है । वह तक्षशिला में जाकर बड़े चातुर्य से विद्रोह को शान्त करता है और वहाँ की जनता का मन जीत लेता है । अत्याचारी चण्डगिरी को भी क्रुद्ध जनता के हाथ से बचाता है । वहाँ की जनता की इच्छानुसार अशोक तक्षशिला के युवराज बनाए जाते हैं । अशोक तक्षशिला को राजकार्य का केन्द्र बनाकर चण्डगिरी को प्रधान सेनापति के रूप में नियुक्त कर देते हैं ।

इधर पाटलिपुत्र में सम्राट बिन्दुसार बीमार पड़े हुए हैं । उनका स्वास्थ बहुत खराब हो जाता है । उन्होंने अपने बड़े बेटे युवराज सुमन का विवाह पाटलिपुत्र के गौरव आचार्य दीपवर्धन की एकमात्र कन्या शीला के साथ तय किया है । अशोक का विवाह हो चुका है उनकी पत्नी का नाम तिष्यरक्षिता है ।

बिन्दुसार का छोटा बेटा तिष्य तथा बेटी चित्रा दूसरे प्रदेश की राजधानी कामरूप में हैं । राजकुमार तिष्य को शिकार खेलने का शौक है । वह एक दिन जंगल में अपने मन्त्री के साथ शिकार खेलने जाता है । उसे वहाँ कापालिक से भविष्यवणी ज्ञात होती है कि, " सम्राट बिन्दुसार की मृत्यु शीघ्र होनेवाली है और उसके बाद पाटलिपुत्र में बहुत खून खराबा होगा । उसका भाई सम्राट सुमन बड़े संकट में आएगा । सुमन की शादी, जो शीला के साथ तय हुई है, नहीं होगी और आज से साठ

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक, पृष्ठ - 19 ।

दिन बाद उसका (तिष्य का) मन्त्री मर जाएगा " आगे चलकर सबकुछ कापालिक के कथनानुसार ही होता है ।

वैशाली प्रान्त में आचार्य उपगुप्त का बौद्ध आश्रम है । वे बौद्ध धर्म के प्रसारक और अहिंसा के समर्थक हैं । वे हमेशा अहिंसा का मार्गाचरण करने की सीख देते हैं तथा बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों को जनता में प्रसारित करते रहते हैं उनके काफी शिष्यगण हैं वे जनता की सेवा करते रहते हैं ।

सम्राट अशोक बौद्धों से घृणा करता है उन पर उसका असीम क्रोध है । इस संबंध में अशोक तथा रानी तिषी का संवाद दृष्टव्य है --

"अशोक – मैं इन बौद्ध भिक्षुओं से घृणा करता हूँ तिषी ।

रानी– वह क्यों ?

अशोक – निठल्ले कहीं के, दुनिया भर को निष्कर्मण्यता का पाठ पढ़ाते फिरते हैं । मेरा बस चलें तो इनका सड़कों पर इस तरह गाते फिरना बन्द ही कर दूँ।"[1]

इधर सम्राट बिन्दुसार की हालत काफी बिगड़ जाती है ।उनसे मिलने बेटी चित्रा कामरूप से चली आती है ।शीला, चित्रा और सुमन मिलकर उनकी सेवा करते हैं । अशोक को सम्राट बिन्दुसार के उत्तराधिकारी के रूप में सुमन का होना कदापि पसंद नहीं है । वह तक्षशिला से पाटलिपुत्र तक नहीं आता । एक दिन सम्राट बिन्दुसार की मौत हो जाती है ।

तक्षशिला में अपने पिता सम्राट बिन्दुसार के मौत की खबर मिलते ही युवराज अशोक सम्राट पद पाने को महत्त्वाकांक्षा हेतु सेनापति चण्ड़गिरी और भारी सेना के साथ रातोंरात गण्ड़क नदी पर पुल बॉधकर पाटलिपुत्र पहुंच जाता हैं । सम्पूर्ण पाटलिपुत्र पर कब्जा किया जाता है । सम्राट सुमन उन्हें कोई विरोध नहीं करता अतः अशोक अपने भाई सम्राट सुमन तथा उनके सहायकों को राजबन्दी बनाकर कारागार में डालता है ।

पाटलिपुत्र की जनता अपने प्यारे सम्राट सुमन की रक्षा के लिए अशोक के विरूद्ध युद्ध छेड़ना चाहती है । वह अत्याचारी अशोक को अपना सम्राट मानने के लिए तैयार नहीं है । मगर सुमन

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 421 ।

वैसा नहीं होने देते । वे अपने भाई अशोक से युद्ध नहीं चाहते । सम्राट सुमन राज्यमोह की अपेक्षा भातृप्रेम से ओतप्रोत हैं । सम्राट सुमन के विचार स्वयं उनके अपने शब्दों में देखिए --" आखिर यह दिन देखना भी भाग्य में बदा था । अशोक , निष्ठुरता के बीज तो तुममें बचपन ही से थे, परन्तु तुम यहाँ तक बढ़ जाओगे , इसकी कल्पना किसी को नहीं थी । ... अशोक तुमने मेरा दिल तोड़ दिया है । मैं कष्ट की परवाह नहीं करता । राजसिंहासन को मनोविनोद और ऐश-आराम का साधन मैंने एक दिन के लिए भी नहीं समझा । जेल की पराधीनता भी मैं सहन कर सकता हूँ । परन्तु तुम्हारी यह निष्ठुरता ।....मैंने तो युद्ध की नौबत ही नहीं आने दी । क्या मैंने यह ठीक किया ? ... हा मेरा अन्तःकरण कहता है, मैंने ठीक किया । बड़ा भाई होकर छोटे पर हाथ उठाता । वह सम्राट बनना चाहता है, उसे सम्राट बन जाने दो ।"[1] अशोक के मन में भी अपने भाई तथा पाटलिपुत्र की जनता के प्रति प्रेम है मगर सम्राट बनने की लालसा उसे हमेशा सताती है अतः वह द्वंद्वावस्था में रहता है, इसी कारण उन पर भावुकता आक्रमण कर उनका हृदय कमजोर बनाती है । जब भी वह अपने कार्य में विचलित होने लगता है तब चण्डगिरी उन्हें प्रेरित करता है । वह सम्राट पद की महत्त्वाकांक्षा को पुण्य महत्त्वाकांक्षा कहता है । अशोक की भावुकता पर सर्वाधिकार (राजाज्ञा) का इलाज करता है । वह अशोक के लिए कुछ भी करने को तैयार है ।

चण्डगिरी क्रूर नीतिज्ञ है । वह अशोक सम्राट बनने की महत्त्वाकांक्षा को पूर्ण करने के हेतु उससे सर्वाधिकार प्राप्त करवाता है । पर चण्डगिरी स्वामिभक्त है । अशोक ने तक्षशिला के नागरिकों के क्रोध से उसकी रक्षा की थी इसी लिए वह अपना संपूर्ण जीवन अशोक के चरणों में न्योछावर कर देता है । अशोक की महासाम्राज्य बनाने की महत्त्वाकांक्षा को पूरी करने के लिए वह कुछ भी करने को तैयार है । इस के लिए वह आगे चलकर अपनी जान तक देता है । वह कहता था - " मेरे मालिक जहाँ आपका पसीना गिरेगा वहाँ मैं अपना खून बहा दूँगा ।"[2]

अशोक उद्विग्न अवस्था में सर्वाधिकार पत्र पर हस्ताक्षर कर देता है और विश्वास का अनुचित उपयोग न करने को कहता है ।

सम्राट सुमन की वाग्दत्ता वधु शीला अशोक से मिलने के लिए आती है । उसे वह अपने विवाह की सूचना दे देती है और कहती है -- " तुम्हारे राज्य के इन झगड़ों से मेरे विवाह का तो

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक, पृष्ठ - 55 ।

2 -वही- पृष्ठ - 68 ।

कोई संबंध है नहीं । यह विवाह परसो होगा ही तुम्हें इसमें कोई आपत्ति तो नहीं है अशोक ?"[1] अशोक अपनी ओर से कोई आपत्ति नहीं प्रकट करता बल्कि विवाह में शरीक होने का आश्वासन भी देता है ।

पर इधर चण्ड़गिरी अशोक के बीच का कॉंटा निकालने हेतु राजाज्ञा का उपयोग करके विवाह के नियत दिन को ही सम्राट सुमन का धोखेबाजी और नृशंसता के साथ वध कर देता है । सुमन की पत्नी शीला बहुत विलाप करती है । वह स्थल पर फेंकी गई मछली के समान तड़प उठती है । वह अशोक को खूनी हत्यारा दगाबाज कहती है । अशोक को भी बहुत दुख होता है वह काफी शोकमग्न है ।

शीला और चित्रा (अशोक की बहन) अशोक के विरूद्ध विद्रोह करने के लिए जनता को उकसाना चाहती है । वे उसके विरूद्ध जनता को संगठित करते फिरते हैं । जनता भी उन्हें पूरा साथ देती है । शाकटायन आचार्य उपगुप्त को यह बात बताता है तो उपगुप्त उन्हें मिलने चले जाते हैं

चित्रा और शीला उनसे आशीर्वाद मॉंगते है पर वहॉं उपगुप्त उन्हें बदले की भावना तथा प्रतिहिंसा को छोड़ देने की सलाह देते हैं । वे उनको अहिंसा का पाठ पढ़ाकर हिंसा से विचलित करके अपने आश्रम में आश्रित कराते हैं । शीला उनका शिष्यत्व स्वीकार करती है । उपगुप्त शीला को उपदेश देते हैं । वे कहते हैं -- " देखो बेटी, देने में जो सुख हे, वह लेने में नहीं है । माता अपने पुत्र के लिए ,स्त्री अपने पति के लिए जो स्वार्थत्याग करती है,उससे बढ़कर सुख इस जगत में और कहॉं मिलेगा । हृदय की जिस कोमलतम अनुभूति का नाम "प्रेम " है, वह सिर्फ " देना ही देना" नहीं तो और क्या ? फिर भी कौन कह सकता है कि प्रेम से बढ़कर मीठी और सुखपूर्ण अनुभूति इस दुनिया में कोई दूसरी भी है । प्रतिदान की यह प्रवृत्ति मनुष्य को उँचा बनाती है । तुम प्रतिहिंसा की बात कहती हो शीला । प्रतिहिंसा किससे ? इस दुनिया में किसका अहंकार अक्षुण्ण बना रहा है ? किस मनुष्य के दिल में कोई दर्द नहीं है, कोई टीस नहीं है ? इस दुर्बल मनुष्य के प्रति प्रतिहिंसा की भावना रखने का अभिप्राय ही क्या है ? तुम अपने ज्ञान को उद्बुद्ध करने का प्रयत्न करो । तुम्हें यह बात समझ आ जाएगी कि इस दुखी दुनिया के घावों में मरहमपट्टी बन जाने में जो सुख है, वह घाव लगाने में नहीं है । समझी बेटी ।"[2] आचार्य उपगुप्त के उपदेशों का पालन कर, प्रतिहिंसा की

----

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 63 ।

2 –वही–, पृष्ठ – 86 ।

भावना ,बदले की भावना को भूलकर शीला आश्रम में जनसेवा का कार्य करने लगती है । चित्रा वापस पाटलिपुत्र लौटती है । अशोक अपने पिता के साम्राज्य को संसार का सबसे बड़ा और सबसे अधिक सुशासित महासाम्रज्य बना देने की महत्त्वाकांक्षा से सीमाप्रान्त कलिंग पर आक्रमण कर देता है । उसकी सत्तालोलुप्ता और भी बढ़ती चली जाती है । इसी कारण वह क्रूर और अत्याचारी बन जाता है

पाषाणहृदयी क्रूर ,निर्लज्ज, दानव सेनापति चण्ड़गिरी पाटलिपुत्र ,वैशाली , तुशाली तथा कलिंग के नागरिकों पर अनन्यतम् अत्याचार करता है । सारे प्रान्त को युद्धभूमि का रूप प्राप्त हुआ है ।युद्धभूमि में जिधर देखो विनाश ही विनाश हो रहा है । मरे हुए मनुष्य तथा घोड़ो की लाशें सैंकड़ो की संख्या में बिखरी पड़ी हैं । घायलों के चीत्कार से आसमान गूँज उठता है ।

आचार्य उपगुप्त सभी बौद्ध–भिक्षु ,शीला तथा उनके सहकारी घायलों की मरहमपट्टी करते हैं । युद्धभूमि में ही उन्होंने चिकित्सालय शिविर खोल दिया है । शीला काम करते–करते थककर रूक जाती है । वह आचार्य उपगुप्त से पूछती है कि यह भयानक जनसंहार कब समाप्त होगा पिताजी ? तब उपगुप्त उसके जवाब में कहते हैं ––" कुछ कहा नहीं जा सकता शीला । मानव–हृदय का अहंकार इस युद्ध के मूल में है । व्यक्ति का अहंकार जब फैलकर समाज या जाति का अहंकार बन जाता है, तब उसकी जड़े पाताल तक चली जाती हैं । दोनों पक्षों में से जब तक एक पक्ष के अहंकार का पूर्ण नाश न हो जाएगा ,तब तक यह लड़ाई बन्द न होगी ।"[1] वे दोनों कलिंग के इस भयानक युद्ध को कैसे खत्म किया जाए इस पर सोचते हैं ।

इस भयानक कलिंग युद्ध में सम्राट अशोक का सेनापति चण्ड़गिरी मारा जाता है । चण्ड़गिरी अत्याचारी होकर भी अशोक के प्रति प्रामाणिक था । वह स्वामिभक्त था । उन्होंने जो कुछ भी किया अशोक के लिए ही किया । आखिर अपने प्राण की बलि तक दे दी, मालिक के लिए खून बहा दिया ।

सेनापति चण्ड़गिरी की मृत्यु के पश्चात् नए सेनापति के रूप में मौखरी को चुना जाता है अशोक सैनिकों के जीवन यापन, उसके खाने पीने आदि के प्रबन्ध सेनापति मौखरी को चण्ड़गिरी जैसा करता था वैसा ही प्रबन्ध अर्थात् आस–पास के गाँवों को जबरदस्ती से लूटने का आदेश देता है । मौखरी उन्हें वर्तमान स्थिति से अवगत करते हुए कहता है कि गाँवों में स्त्रियों, बच्चों और बूढों को

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ – 99 ।

छोड़कर कोई बचा नहीं महाराज । तब अशोक बड़े आवेश के साथ चिढ़कर जवाब देता है –" हम यह सब कुछ नहीं जानते । कहीं से प्रबन्ध करो । यह प्रबन्ध तो करना ही होगा । इस मामूली–सी दया–माया के पीछे मैं इतने दिनों की मेहनत बरबाद नहीं कर सकता । देखो, तुम्हें मालूम है ना, कि पूरे दो वर्षों तक चण्ड़गिरी ने इस युद्ध का सेनापतित्व निबाहा, परन्तु उसने एक बार भी इस तरह की कोई शिकायत मुझसे नहीं की ।"[1] यहाँ अशोक की क्रूरता चरमसीमा पर पहुँची हुई परिलक्षित होती है । स्त्रियों ,बच्चों और बूढ़ों पर अनन्वित अत्याचार होते हैं क्योंकि सब जवान लोग तो युद्ध में काम आए थे ।

इधर कलिंगराजके सेना की ताकत बहुत क्षीण पड़ गई है । इसलिए वह दक्षिण की ओर से अपनी सेना वापस बुलाकर उस ओर का युद्ध बन्द कर देता है । इसी समय कठिन परिस्थितियों से बाहर निकल ने हेतु अंतिम अस्त्र के रूप में कलिंगराज एक भारी षड़्यंत्र बनाता है । वह अशोक के शिविर में रात्री के समय सोते हुए अशोक की हत्या करने की भयंकर साजिश रचता है । इस षड़्यंत्र की सफलता पर कलिंगराज को पूरा भरोसा है ।क्योंकि इसमें अशोक के रक्षकों को भी शामिल किया गया है ।फिर भी यदि इस चाल में उन्हें सफलता न मिली तो वह अशोक की अधीनता स्वीकार करने का निश्चय करता है । अशोक की हत्या के बाद वह बची–खुची सेना के साथ सम्राट के शिविर पर भयंकर आक्रमण करने का इरादा करते हैं ।

इस षड़्यंत्र की खबर शीला को चरद्वारा मिलती है । शीला इस पर काफी सोच–विचार करती है । उन्हें अपना कर्तव्य सुझ जाता है । आखिर वह आचार्य उपगुप्त को अपना निश्चय बताती है । अशोक को बचाने के लिए वह उपगुप्त से कहती है –" मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं आज अशोक की जगह अपने प्राण देने जाऊँगी आचार्य ।"[2]

आचार्य उपगुप्त भी शीला के इस महान त्याग के लिए तैयार हो जाते हैं क्योंकि इस भयंकर युद्ध को ,नरसंहार को समाप्त करने का यही एक मार्ग उन्हें सुझ जाता है । अगर अशोक को इस षड़्यंत्र का सन्देह हो गया तो वह सम्पूर्ण कलिंग में एक भी व्यक्ति को नहीं छोड़ेगा । इसी कारण वे शीला के त्याग को तैयार होते हैं ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 104 ।

2 –वही– पृष्ठ – 111 ।

शीला और उपगुप्त ऐसा प्रबन्ध करवाते हैं कि षड़्यंत्र के दिन अशोक शिविर से बाहर रहें । अशोक को गुप्त रूप से शिविर के बाहर निकालकर आश्रम में ले आते हैं और छद्मवेश में शीला स्वयं शिविर में उस रात अशोक की जगह सोती है । इस बात का पता अशोक को भी नहीं होता । अशोक को गुप्त रूप से आश्रम में लाने का एकमात्र उद्देश्य उस षड़्यंत्र से उनकी प्राणरक्षा करना तथा युद्ध को समाप्त होते देखना यही होता है । जब सम्राट अशोक उपगुप्त से बार-बार पूछता है तब उपगुप्त उसे सारी बात बता देता है । तब अशोक उद्विग्न हो जाता है वे उसे समझाते हैं --" उद्विग्न मत होओ अशोक । सुनो, रात का दूसरा प्रहर अब समाप्त हो गया है । शीला सम्भवतः अब तक तुम्हारी जगह अपने प्राण दे चुकी होगी ।"[1] सम्राट अशोक का सारा शरीर काँपने लगता है वह बड़ी शीघ्रता से आश्रम से बाहर निकलकर घोड़े पर सवार होकर हवा की तेजी से अपने शिविर की ओर रवाना हो जाता है । जब सम्राट अशोक शिविर में पहुँचता है तब वहाँ सम्पूर्ण शिविर में कोलाहल मचा हुआ था उनके हजारों सैनिक पंक्तिबद्ध खड़े थे उनके बीच शीला की मूर्च्छित देह पड़ी थी । सीने पर और कंधे पर भारी घाव पहुँचे थे , उसका सम्पूर्ण शरीर खून से लथपथ था । शीला के घावों पर जर्राह मरहमपट्टी कर देते हैं । राजवैद्यों के उपचार द्वारा शीला बच जाती है ।

भाभी शीला के सेवाभाव आत्मबलिदान की भावना सम्राट अशोक के हृदय को झकझोर देती है । इसका उस पर भारी प्रभाव पड़ता है और वह आचार्य उपगुप्त से दीक्षा लेकर बौद्ध धर्म स्वीकार करता है । हिंसा में अहिंसा का जन्म हुआ । शत्रुओं के लिए काल के समान इस महायोद्धा का हृदयपरिवर्तन हुआ । वे अहिंसा और लोककल्याण के संदेशवाहक बन गए । वह अपनी सारी शक्ति सम्पूर्ण प्रजा की भलाई में लगाने और भविष्य में कभी भी युद्ध न करने की शपथ लेते हैं । वे घोषित करते हैं --" हमारा यह महासाम्राज्य राजनीति और शक्ति-संघर्ष के लिए नहीं है, यह धर्म के प्रचार के लिए है ।[2] उन्होंने इसी पृथ्वी पर स्वर्ग की सृष्टि करने का संकल्प किया और उस दृष्टि से कार्य आरंभ किया ।

अशोक की महासाम्राज्य बनाने की आसक्ति पर कठोर प्रहार होने के कारण युद्ध के बारे में उन्हें विरक्ति हो जाती है । हिंसा-अहिंसा में परिवर्तित हो जाती है ।एक हिंसावादी चरित्र को बदलनेवाली मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया शीला के माध्यम से हो जाती है और अशोक अहिंसा का प्रसारक बन जाता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशाक, पृष्ठ - 115 ।

2 -वही- पृष्ठ - 120 ।

कर्तव्यशील ,त्याग की मूर्ति महान भार्भ शीला अपने कर्तव्य की पुकार सुनकर अपना जीवन जिस उद्देश्य के लिए समर्पित किया उसे पूर्ण करने के लिए फिर आश्रम में जाने की तैयारी करती है । जब अशोक चित्रा ओर तिषि उन्हें रोकने का प्रयास करते हैं तब वह कहती है --" यह कर्तव्य का सन्देश है । मैं इस सन्देश की कैसी उपेक्षा कर सकती हूँ मुझे सीमाप्रान्त की ओर जाना ही होगा और जाना सदा के लिए होगा ।"[1] अशोक उन्हें गद्गद् स्वर से बिदाई देता है । यहाँ कथा समाप्त होती है ।

2.1.2 विवेच्य नाटक का मूल्यांकन --

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का " अशोक ' प्रथम नाटक है । यह नाटक ऐतिहासिक घटना को आधार बना कर लिखा गया एक आदर्शप्रधान नाटक है । इस नाटक का नायक अशोक ओर नायिका शीला है । यह नाटक मौर्यसाम्राट अशोक के जीवन के पूर्व भाग की घटनाओं से संबंध रखता है । इसमें एक अत्याचारी शासक के उत्थान-पतन और हृदयपरिवर्तन का चित्र देखने को मिलता है ।

विवेच्य नाटक की कथावस्तु जटिल है फिर भी संवाद, पात्र, वातावरण निर्मिति तथा भाषा की श्रेष्ठता के कारण कथावस्तु में प्रवाह और निश्चित उद्देश्य को स्पष्ट करने की क्षमता है । कथावस्तु के प्रारंभ से ही उसमें कौतुहल निर्माण होता है । कथावस्तु के आरंभ में कलात्मक नाटकीय प्रयोग तथा संवादों में सौन्दर्य और रसात्मकता होने के कारण कथावस्तु का आरंभ आकर्षक बन पड़ा है ।"अशोक " नाटक में कलिंग की लड़ाई की शुरुआत तथा लड़ाई का भीषण हृदयद्रावक वर्णन अपनी चमरसीमा पर पहुँच जाता है । नाटक का अंत महत्त्वाकांक्षी, अत्याचारी शासक सम्राट अशोक के हृदयपरिवर्तन से हुआ है ।

इस नाटक के पात्र कथावस्तु के अनुकूल , यथार्थवादी लगते हैं । चरित्रों में कथावस्तु का उद्घाटन करने तथा उसके उद्देश्य की पूर्ति करने की पूर्ण क्षमता है । विद्यालंकार जी ने सफल चरित्रों की सृष्टि की है । इस नाटक में संवादों की भाषा शैली पत्रात्मक ,नाटकीय तथा आत्मकथात्मक भी है । भाषा सरल, स्पष्ट एवं सारगर्भित तथा भावानुकूल है । संवाद देश, काल, पात्र,

----

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक , पृष्ट - 123-24 ।

परिस्थिति तथा घटना के अनुकूल हैं । संवाद कहीं–कहीं बहुत लंबे हैं, पर इससे कथावस्तु में कोई बाधा नजर नहीं आती बल्कि कथा को अधिक स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध हुए हैं । संवाद ध्वन्यात्मक तथा नाटकीय बन पड़े हैं । इसके साथ ही ये तर्कयुक्त, भावानुरूप ,पात्रों की अवस्था योग्यता के अनुरूप दिखाई देते हैं । पात्रों के चरित्र को विकसित करने तथा कथावस्तु को गति देने की पूर्ण क्षमता संवादों में हैं । अपने इस नाटक में वातावरण निर्मिति में लेखक ने ऐतिहासिक वातावरण के साथ–साथ वर्तमान , सामाजिक, धार्मिक , राजनैतिक वातावरण का तालमेल बिठाकर एक आदर्श वातावरण *की निर्मिति की* है । वातावरण निर्मिति में ऐतिहासिक पात्र, घटना, पात्रों की भाषा, संस्कृति को सामने रखकर उसमें जमा हुए कुडे–कबाड़े के प्रति विवेचन करते हुए आदर्श प्रस्थापित करने की कोशिश की है । इसमें पात्रों का हृदयपरिवर्तन ,त्याग, सेवा आदि की प्रतिष्ठापना कर दी है । इस नाटक का उद्‌देश्य समाज में सामाजिक सुव्यवस्था तथा अहिंसा का वातावरण निर्माण कर धार्मिक , सांस्कृतिक , राजनीतिक वातावरण में आदर्श की प्रतिष्ठापना करना और अत्याचारी व्यक्तियों का हृदयपरिवर्तन कर उनमें अहिंसा के बीज बोना है । इसमें जो लोग अमानवीय ,राक्षसी व पशुता की वृत्ति को अभी तक सँभाले हुए हैं उनमे मनुष्यता का बीज बोना तथा युद्ध के प्रति घृणा निर्माण करना यही इस नाटक का उद्‌देश्य है । यह नाटक ऐतिहासिक कोटि का होने के कारण रंगमंचीय प्रस्तुति में कठिनाई हो जाती है । फिर भी आज के आधुनिक तंत्रज्ञान के आधार पर यह नाटक रंगमंच पर सफल हो सकता है । असल में यह नाटक रंगमंच की दृष्टि से नहीं लिखा गया इसका मूल उद्‌देश्य रंगमंच नहीं बल्कि पाठ्य–नाट्य ही रहा है । अतः इसकी लोकप्रियता रंगमंच की अपेक्षा पाठ्य–नाट्य में ही अधिक है ।

निष्कर्ष--

"अशोक " नाटक के अध्ययन के पश्चात मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि ----

1 यह नाटक ऐतिहासिकता को आधार बनाकर लिखा गया आदर्शप्रधान नाटक है ।

2 इस नाटक का नायक अशोक तथा नायिका शीला है ।

3 इस नाटक की कथावस्तु महान ऐतिहासिक पात्र मौर्य सम्राट अशोक के व्यक्तित्व तथा उसके जीवन के पूर्व भाग पर आधारित घटना से संबंध रखती है ।

4 नाटक की कथावस्तु अपने निश्चित उद्‌देश्य को स्पष्ट करने में सक्षम है ।

5 संवादों की दृष्टि से नाटक सफल बन पड़ा है ।

6 देश–काल वातावरण में ऐतिहासिक वातावरण के साथ–साथ सामाजिक ,राजनैतिक ,धार्मिक सांस्कृतिक वातावरण की निर्मिति इस नाटक में वर्तमान परिस्थिति को मध्यनजर रखते हुए दोनों में तालमेल बिठाकर की गई है । वातावरण निर्मिति में लेखक को काफी सफलता मिली है ।

7 इस नाटक की भाषा सरल, सुस्पष्ट एवं सारगर्भित है । इसमें तर्कयुक्त एवं स्वभावानुकूल तथा ध्वन्यात्मक भाषा का प्रयोग भी मिलता है । पात्र तथा चरित्र के अनुकूल भाषा का प्रयोग करने में लेखक सफल हुए हैं ।

8 इस नाटक का प्रधान उद्देश्य है, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक सुव्यवस्था का निर्माण करना, हिंसा , युद्ध तथा पशुता के आचरण के प्रति घृणा करना और शांतिमय मनुष्यत्व की प्रतिष्ठापना तथा आंतरिक संघर्ष को नष्ट कर प्रबल राष्ट्र की निर्मिति करना । तात्पर्य यह कि इसमें लेखक की राष्ट्रीय तथा सामाजिक संवेदना दृष्टिगोचर होती है ।

9 अभिनय की दृष्टि से नाटक सफल है फिर भी रंगमंच पर इसके प्रयोग कठिन सिद्ध हो जाते हैं क्योंकि घटना, प्रसंग रंगमंच पर प्रस्तुत करना कठिन काम है । असल में यह नाटक रंगमंच के लिए नहीं लिखा गया । इसका मूल उद्देश्य पाठ्य–नाट्य ही रहा है ।

2.2 **" रेवा "––**

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का द्वितिय नाटक " रेवा " सन 1938 में प्रकाशित हुआ । "अशोक " की तरह यह ऐतिहासिक न सही परन्तु इसका आधार अवश्य ऐतिहासिक है ।

इस नाटक में पाँच देशों का वर्णन आया है, वे हैं –– भारतवर्ष, काम्बोज, चम्पा , आशाद्वीप । यह नाटक सांस्कृतिक चेतना से अनुप्राणित है । इसमें नाटककार ने नाटकीय चरित्र सृष्टि द्वारा आदर्श के धरातल पर अन्तकरण की उदात्त वृत्तियों को ही मुख्य रूप से उभारा है । इस नाटक में पात्रों की संख्या पर्याप्त मात्रा में है । इनके अधिकतम् पात्र सेवाभाव,तप, त्याग, आत्मबलिदान ,अहिंसा तथा परोपकार आदि उदात्त भावनाओं से ओतप्रोत हैं जिनके जरिए सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति हुई है ।

" रेवा " भारतीय संस्कृति के विदेशों नें विस्तार की कहानी है । परंतु यह विस्तार शस्त्र बल के आधार पर नहीं अपितु भारतीय संस्कृति की आंतरिक प्रचुरता और श्रेष्ठता के आधार पर होता है । काम्बोज और चम्पा के बीच युद्ध चलता रहा फिर भी जहाँ तक उस बड़े भूभाग में भारतीय संस्कृति के प्रसार का संबंध है वह सब का सब पूर्णतः शान्ति और मित्रता के आधार पर ही हुआ है।

इस रचना में दो संस्कृतियों का संघर्ष दिखाया है । काम्बोज के राजकुमार यशोवर्मा शस्त्र के बल से सास्कृतिक विजय प्राप्त करना चाहते हैं ।इसके विपरित आचार्य पुण्डरीक है जो शस्त्र की अपेक्षा शास्त्र विजय पर विश्वास रखकर सांस्कृतिक विजय की कल्पना करते हैं ।इसके साथ ही दूसरे पक्ष में आशाद्वीप के निवासी अपने प्रदेश से परे दूसरों से संपर्क न कर स्वयं में ही श्रेष्ठता का अनुभव कर कूपमण्डूक बने रहते हैं तो चोलराज और उसकी कन्या इन्दिरा भारत के बाहरी देशों से सम्बन्ध जोड़कर अपनी संस्कृति का विस्तार कर सांस्कृतिक लेन-देन का व्यवहार करते रहते हैं ।

2.2.1 **कथावस्तु--**

आशाद्वीप के राजमहलों के निकट एक सामुद्रिक पहाड़ी पर शिवमन्दिर है । इस मन्दिर के अत्यंत वृद्ध पुजारी हैं जिन्हें सम्पूर्ण आशाद्वीप में " गुरूदेव " कहा जाता है । गुरूदेव का एक शिष्य है जिसका नाम है सन्दीप । वह हररोज मन्दिर की पूजा-अर्चा करता रहता है ।

आशाद्वीप संपन्न, संस्कृत , सभ्य और स्वर्गसमान सुखी द्वीप है । इसी आशाद्वीप की भावी महारानी राजकुमारी रेवा है । गुरूदेव रेवा को उसके जीवन का रहस्य बताना चाहते हैं जो राजकुमारी का जीवनभर पथ-प्रदर्शन करता रहेगा । एक दिन गुरूदेव शिवमन्दिर के चबुतरे पर बैठकर वह रहस्य राजकुमारी रेवा को बताते हुए कहते हैं --" सुनो रेवा , इस पृथ्वी के सब से अधिक गरिमाशाली देश का सन्देश लेकर एक विदेशी राजपुत्र बड़े-बड़े पालों और ऊँचे-ऊँचे मस्तूलों वाले जहाज पर चढ़कर तुम्हारे इस आशाद्वीप में आएगा ।तुम उसकी प्रतीक्षा करना । विश्वभर में केवल वही एक पुरूष तुम्हारा दूल्हा बनने के योग्य है राजकुमारी । इस बात को आजन्म याद रखना ।"[1] वे उसे बताते हैं कि वह राजकुमार तुम्हें स्वर्ग का संदेश सुनाएगा । उसे प्रसन्न कर रिझाने का प्रयत्न करना । उसका स्वागत अग्निचुर्ण (बारूद) के गोले चलाकर बड़े धूमधाम से करना ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 16-17 ।

गुरूदेव राजकुमारी रेवा को बड़े–बड़े उपदेश देते हैं तथा अंधविश्वास, भ्रम , मिथ्याभिमान को मिटाने ओर विदेश में भी संबंध प्रस्थापित कर फूलने – फलने की सलाह देते हैं । क्योंकि आशाद्वीप के निवासी सांस्कृतिक उच्चता के दंभ में अन्य संस्कृतियों को हेय, नगन्य और शून्य समझते हैं, वे किसी से ज्ञान-प्राप्ति की चाह न रखनेवाले और कूपमण्डूक बने रहने में ही स्वयं की श्रेष्ठता अनुभव करते हैं । गुरूदेव बताते हैं कि यह सब भ्रम है, झूठ है, मिथ्या है ।

गुरूदेव राजकुमारी रेवा को उपर्युक्त रहस्य तथा बड़े–बड़े उपदेश सुनाकर समुद्र की लहरों में अन्तर्धान हो जाते हैं । वे समुद्र में आत्मसमर्पण करते हैं । राजकुमारी रेवा गुरूदेव के उपदेश के अनुसार उस महान, वीर, साहसी राजकुमार की प्रतीक्षा करने हर रोज शिवमन्दिर के चबूतरे पर जाती है और उस उँचे–उँचे पालों और मस्तुलों वाले जहाज की राह देखती रहती है । इधर भारतवर्ष में भारत–सम्राट चोलराज और उसकी कन्या इन्दिरा भारत के परे दूर–दूर के बाहरी देशों से भी संबंध प्रस्थापित कर अपने पूर्वजों से अर्जित महान संस्कृति के प्रकाश को अखिल विश्व के सभी देशों में विकिर्ण करना चाहते हैं । भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता के प्रसार और प्रचार के उद्देश्य से वह अपने राज्य से हर साल समय–समय पर अनेक विश्वप्रसिद्ध विद्वान ,कुशल शिल्पियों , ज्ञानी महात्माओं के जत्थे विभिन्न द्वीपों , खंडों में भेजते रहते हैं तथा उन्हें अपने राज–भाण्डार से यथोचित् सामग्री मदद रूप में देते रहते हैं । इसीतरह अनेक युवक सांस्कृतिक प्रसार तथा सेवाभाव के उद्देश्य से विदेशों में चले गए हैं ।

चोलराज के विचार हैं कि अगर हम मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखना, परखना चाहते हैं तो संस्कृति की लेन–देन आवश्यक है । नाटककारने सम्पूर्ण नाटक में चोलराज और इन्दिरा को भारतीय संस्कृति के प्रतिष्ठापक एवं कलाप्रेमी के रूप में चित्रित किया है ।

काम्बोज के युवराज यशोवर्मा महत्त्वांकांक्षी ,साहसी और पराक्रमी राजकुमार हैं । वे अपने पिता समान चाचा की देखरेख में काम्बोज का शासन चला रहे हैं । " यशोवर्मा राज्यसंचालन की अपेक्षा राज्यविस्तार, साम्राज्य स्थापना के कर्तव्य को ज्यादा महत्त्व देता है ।"[1] शस्त्र के बल पर वे साम्राज्य स्थापित करना चाहते हैं । इसके विरूद्ध उनका मित्र जनार्दन उन्हें ऋषि पुण्डरिक के विचार याद दिलाता है जो शस्त्र–विजय की अपेक्षा सांस्कृतिक विजय पर विश्वास करते हैं । किन्तु यशोवर्मा महत्त्वांकांक्षी ,दृढ़निश्चयी तथा साहसी राजकुमार है । वह अपने बाहुबल पर और अपनी

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 35–36 ।

सामर्थ्य पर विश्वास करता है । उसके लिए सिर्फ " विजय " का सिद्धान्त मान्य है ।

युवराज यशोवर्मा काम्बोज को सब से बड़ा महासाम्राज्य प्रस्थापित करने की महत्त्वाकांक्षा लिए हुए हैं । उनकी साम्राज्य विजय की कल्पना नहरों से जलसिंचन के समान है –" मिट्टी खोदकर नहरे बनाओ और नदी से पानी लेकर मरूभूमि को भी उपजाऊ बना दो ।"[1] यह उनका सपना है । साम्राज्य विस्तार करके उसे सुजलाम, सुफलाम बनाने , सुशासित बनाने, कला–संस्कृति, सभ्यता का विकास करने की उनकी पुण्य महत्त्वाकांक्षा है । इसीकारण वे साम्राज्य–विजय के लिए निकल पड़ते हैं । काम्बोज के ऋषि पुण्डरिक परम्परागत आचार्य एवं त्यागी ऋषि हैं । काम्बोज में उनका आश्रम है ऋषि पुण्डरिक भारतवर्ष से यहाँ आए हैं । वे भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रतीक हैं । वे अपने आश्रम में छात्रों को उपदेश करते हैं । उन्हें आदर्श नागरिक बनाने का काम वे कर रहे हैं । वे विद्यार्थियों को एकाग्रचित्त होकर स्वाध्याय में ही लगा रहने तथा अपने व्यक्तित्व को समुद्र की तरह विशाल, गम्भीर और स्वप्रतिष्ठ बनाने का प्रयत्न करने का उपदेश देते हुए आगे कहते हैं कि "इच्छाओं के प्रवाह के सामने पराजय स्वीकार कर स्वयं को असंयमित, पथभ्रष्ट और उच्छृंखल मत बनाओ ।"[2] नाटककार ने यहाँ उपनिषद और गीता के उपदेश को अत्यन्त संक्षेप में ऋषि पुण्डरिक के माध्यम से प्रस्तुत किया है ।ऋषि पुण्ड़रिक शस्त्रबल की अपेक्षा शास्त्र बल को श्रेष्ठ मानते हैं । वे कहते हैं कि क्रोध को अक्रोध से जीतो और शत्रु को मित्रता से ।

युवराज यशोवर्मा ने बहुतांश द्वीपसमूह को जीत लिया है । उन सभी विजित द्वीपों पर आर्य संस्कृति का लाल झंड़ा फहरा दिया है जो मनुष्यता का शान्ति का और भ्रातृभाव का झंड़ा है । आचार्य पुण्ड़रिक की दृष्टि में " आर्यत्व की इस पताका का आधारभूत सिद्धान्त यह है कि उसे किसी देश पर जबरदस्ती नहीं फहराना चाहिए इस पताका का आधार तो हृदय की विजय है ।"[3] यशोवर्मा अब चम्पा साम्राज्य पर अधिकार पाने तथा उन्हें अपने साम्राज्य से जोड़ने के उद्देश्य से चम्पा पर आक्रमण करना चाहते हैं । वे आचार्य पुण्ड़रिक के पास आशीर्वाद लेने के लिए आश्रम में आते हैं । परन्तु पुण्ड़रिक उन्हें चम्पावासियों के साथ युद्ध न कर उनसे घनिष्ट मित्रता प्रस्थापित करने की सलाह देते हैं । इससे दोनों राष्ट्रों की सम्मिलित शक्ति विश्वभर के लिए चर्चा का विषय बन सकती है, ऐसा उनका कहना है । आचार्य पुण्ड़रिक राष्ट्रीय एकता और बंधुता प्रस्थापित करना चाहते हैं । यशोवर्मा

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 37 ।
2 वही, पृष्ठ – 44–45 ।
3 वही, पृष्ठ – 47 ।

उनकी राय पर श्रद्धापूर्वक विचार करने का आश्वासन देते है परन्तु यदि तब भी चम्पा पर आक्रमण करने का निश्चय किया गया तब भी आपका आर्शीर्वाद मेरे साथ है न ? ऐसा प्रश्न पूछते हैं, तब पुण्ड़रिक उत्तर देते हैं --" मेरी हार्दिक सद्भिलाषाएँ सदा तुम्हारे साथ हैं।"[1] आगे चलकर महत्त्वाकांक्षी यशोवर्मा चम्पा पर आक्रमण कर देता है । परन्तु चम्पा के सैनिक वीर हैं, उन पर विजय पाना आसान काम नहीं था । इसी हालत में चम्पावासियों ने अग्नि को अपने वश में कर लिया था । वे अग्निचुर्ण (बारूद) के गोले बनाने की शिक्षा जानते थे जिसका काम्बोज वासियों को थोड़ा बहुत भी ज्ञान नहीं था । इसी कारण अग्निचुर्ण की मदद से चम्पावासियों ने यशोवर्मा को पूरी तरह पराजित किया ।

चम्पा में पराजय होने के बाद यशोवर्मा और मित्र जनार्दन दर-दर की ठोकरे खाकर फिरते हैं ।इसी समय काम्बोज में यशोवर्मा का चचेरा भाई कृष्णवर्मा सारा राज्य कारोबार अपने हाथ में ले लेता है और यशोवर्मा के अनुयायीयों , सेनापति और अपने पितृव्य को भी कैद कर जेल में डाल देता है । इस तरह उन्हें अपने राज्य से भी हाथ धोना पड़ा । यशोवर्मा और जनार्दन भटकते-भटकते कुमारीद्वीप में आ पहुँचते हैं । वहाँ उनकी भेंट मकरन्द से होती है । मकरन्द कुमारीद्वीप का प्रसिद्ध भारतीय व्यापारी है । मकरन्द यशोवर्मा की सहायता के लिए उन्हें लेकर भारत की ओर जहाज से चल पड़ता है परन्तु वह जहाज राह भटक जाता है और भारत न पहुँचकर एक स्वर्णिम अपरिचित नगरी आशाद्वीप में जा पहुँचता है ।

इधर राजकुमारी रेवा हर-रोज की तरह शिवमन्दिर में पूजा करने तथा राजकुमार की प्रतीक्षा में चली आई है । वह शिवमन्दिर की चट्टान पर खड़ी हुई है । वहाँ से ऊँचे-ऊँचे पालों वाले जहाज को आते देखकर वह खुश होती है ।वह समझ जाती है कि उसका चिर प्रतीक्षित प्रेमी आ रहा है । वह सन्दीप को मन्दिर पर मितृत्व का राजकीय लाल झंड़ा फहराने तथा राजकीय वाद्यों से स्वागत के मधुर स्वर बजाने का आदेश देती है । अपने उद्यान के फूलें और अग्निचुर्ण (बारूद) के गोले उड़ाकर उस प्रेमी , राजकुमार अतिथि का चिर-संचित उल्लास एवं उमंग के साथ स्वागत करती है ।

रेवा अपने महलों में युवराज यशोवर्मा को रखकर, अपने हृदय का समस्त प्रेम उन पर उँड़ेल देती है किन्तु द्वीप निवासियों को यह बात पसंद नहीं आती । एक विदेशी राजकुमार को आशाद्वीप में इतनी महत्ता देना उन्हें पसंद नहीं है । वे इस बात को अपनी प्रतिष्ठा को कलंक समझते हैं । प्रजा

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 51 ।

13214
A

में असंतोष फैल जाता है । लोग रेवा से आशाद्वीप की प्रतिष्ठापर कलंक न लगाने का अनुरोध करते हैं । रेवा आशाद्वीप की प्रजाहितदक्ष, कर्तव्यशील महारानी है । अपनी सम्पूर्ण प्रजा पर वह माता समान प्रेम करती है । वह अपनी व्यक्तिगत इच्छा या स्वार्थ के कारण प्रजा के चित्त को कष्ट पहुँचाना नहीं चाहती । वह युवराज यशोवर्मा से कहती है --" मेरा व्यक्तिगत स्वार्थ चाहे कुछ भी हो परन्तु मैं करूँगी वही जो मेरी प्रजा चाहेगी ।"[1] महारानी रेवा अपनी प्रजा के विरूद्ध कुछ भी कार्य नहीं करना चाहती है । अपनी प्रजा की खातिर अपनी व्यक्तिगत इच्छा आकांक्षा की बलि देने का निश्चय करती है ।

रेवा विवश होकर और शोकातुर नयनों से अपने प्रेमी को उनके कर्तव्य की याद दिलाकर साम्राज्य-विजय के लिए शुभेच्छा देकर विदा करती है । किन्तु एक बार पुनः भविष्य में मिलने की प्रार्थना करती है । स्वयं रेवा के शब्दों में --" मैं पुनः उत्सुकता से तुम्हारे आने की राह देखूँगी आजीवन मैं तुम्हारी राह देखूँगी ।"[2] महारानी रेवा आजीवन अपनी प्रजा की सेवा करती है और आजन्म युवराज यशोवर्मा की राह देखती रहती है ।

यशोवर्मा रेवा से अग्निचुर्ण (बारूद) का उपहार लेकर काम्बोज लौटता है । उसके बावजूद उन्हें चम्पा में पराजय स्वीकार करना पड़ा उन अग्निचुर्ण से गोले बनाने की शिक्षा उन्हें मिल गई । काम्बोज में उसका जोरदार स्वागत होता है । काम्बोज की सम्पूर्ण प्रजा उसके साथ है । सारे नागरिक अत्याचारी कृष्णवर्मा पर नाराज है । यशोवर्मा सरल, विनीत तथा नितिज्ञ हैं । वे अंतर्गत यादवी को मिटाने हेतु कृष्णवर्मा पर कोई कार्रवाई नहीं करना चाहते । वे उनसे सरल शब्दों में पूछते हैं --" तुम राजा बनना चाहते थे ,तो मुझसे कह देते । इस तरह प्रजा पर अत्याचार करने की सेनापति को और अपने पूज्य पिता तक को जेल में डालने की तुम्हें क्या आवश्यकता थी ? मैं राजा बनना सचमुच नहीं चाहता था ।तब मैं खुशी से तुम्हें राजा बना देता और स्वयं तुम्हारे लिए आधा विश्व जीत लेता ।"[3] पराक्रमी यशोवर्मा नागरिकों की इच्छा और सहयोग से काम्बोज का राज्य पुनः प्राप्त करते हैं । यशोवर्मा के चचा " पितृव्य" अपने बेटे अत्याचारी कृष्णवर्मा की हत्या कर देते हैं ।वह अपने किए की सजा भुगतता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 110 ।
2 वही, पृष्ठ - 117 ।
3 वही, पृष्ठ - 124-25 ।

यशोवर्मा फिर से चम्पा पर हमला करने का निश्चय करते हैं । अग्निचुर्ण के गोले और अन्य युद्ध साम्रगी लेकर पूरी तैयारी के साथ वे चम्प पर आक्रमण कर देते हैं । दोनों के बीच घमासान युद्ध हो जाता है । उन्होंने चम्पा के अधिकांश साम्राज्य को जीत लिया है । केवल राजधानी बाकी रह जाती है । युद्धभूमी में यशोवर्मा और चम्पाधिपति आमने-सामने लड़ रहे हैं उनके बीच का संवाद देखिए--

"चम्पाधिपति – डाकू ! लुटेरे ! देश में आकर मुझ से इसतरह ताने जनी की बाते करते तुम्हें लज्जा नहीं आती ?

यशोवर्मा– इसमें डाकूपन की बात ही क्या है ? सभ्यता के प्रसार के लिए साम्राज्य निर्माण का कार्य तो वीरता का कार्य है ।"[1] चम्पाधिपति और यशोवर्मा में युद्ध होता है । यशोवर्मा चम्पाधिपति को मार डालते हैं । इसी अस्त्र-प्रहार में सेनापति श्रीदेव यशोवर्मा की जान अपने प्राण देकर बचाता है । श्रीदेव ने अपने स्वामी की प्राणरक्षा हेतु बलिदान किया ।

इधर पुण्ड़रीक अपनी मातृभूमि भारतवर्ष आकर इन्दिरा के साथ यशोवर्मा की सहायता करने के लिए विदेश यात्रा पर निकल पड़ते हैं । कुमारीद्वीप में उनकी मकरन्द से भेंट हो जाती है । मकरन्द उन्हें सब समाचार बता देते हैं । श्रीदेव के बलिदान का पुण्ड़रीक पर आघात हो जाता है पर वे स्वयं को सँभालते हैं ।जब पुण्ड़रीक और इन्दिरा काम्बोज पहुँचते हैं तो उस समय यशोवर्मा का राज्याभिषेक हो रहा होता है । ऋषि पुण्ड़रीक और इन्दिरा को देखकर सम्राट यशोवर्मा बहुत खुश होते हैं । परन्तु इस समारोह में उन्हें महारानो रेवा की अनुपस्थिति सताती है । उन्हें बार-बार महारानी रेवा की याद आती रहती है । वे उसके लिए तड़प उठते हैं । सभी कामकाज छोड़कर वे आशाद्वीप की ओर उड़ जाना चाहते हैं मगर साम्रज्य के बन्धन उन्हें यहाँ कैद किए हुए हैं । सम्राट यशोवर्मा काम्बोज में शिमन्दिर की स्थापना करते हैं । इस शिवमन्दिर का शिल्पी गोविन्द भारत वर्ष का जगत्प्रसिद्ध महाशिल्पी है । संसार का अनन्यतम् लोकोत्तर पुरूष, आदर्श मनुष्य, काम्बोज का हृदयसम्राट ,दुर्जेय वीर यशोवर्मा कलाप्रेमी और आर्य सभ्यता के समर्थक एवं प्रसारक भी हैं । उनकी साम्राज्य-विजय की पुण्य महत्त्वाकांक्षा पूरी हो गई वे सम्राट बन गए ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 129 ।

ऋषि पुण्डरीक साम्राज्य के लिए सम्राज्ञी की आवश्यकता बताकर भारतीय चोलवंश की कन्या इन्दिरा को काम्बोज की सम्राज्ञी बनाने का अनुरोध करते हैं । यशोवर्मा उनके इस अनुरोध का स्वीकार करते हैं । भारतवर्ष के सम्राट और इन्दिरा के भाई चोलराज परान्तिक भी इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हैं । यशोवर्मा इन्दिरा को काम्बोज के महासाम्राज्य को सम्राज्ञी बना लेते हैं ।

इधर राजकुमारी रेवा अब भी अपने प्रेमी की मन्दिर की चट्टान पर बैठी–बैठी राह देख रही है। एक दिन भयंकर समुद्री तूफान और भूकम्प में स्वर्गसमान समस्त आशाद्वीप उसके निवासी और महारानी रेवा काल के गात में समा जाते है । अनन्यसाधारण स्वप्नमय नगरी खण्डहर के अवशेष के रूप में बाकी रह जाती है ।

सम्राट यशोवर्मा राजकुमारी रेवा से दिया वचन पूर्ण करने तथा उन्हे पुनः एक बार मिलने के लिए पुण्ड़रीक ,जनार्दन और सम्राज्ञी इन्दिरा के साथ आशाद्वीप की ओर चल पड़ता है । पर वहाँ पहुँचकर उन्हें आशाद्वीप के बजाय राजमहलों के टूटे–फूटे खण्ड़हरतथा भग्न शिवमन्दिर के निकट सन्दीप की लाश देखने को मिलती है ।

सागर की अथाह जलराशि के बीच आशाद्वीप तथा राजकुमारी रेवा को न पाकर यशोवर्मा का हृदय करूणा से भर आता है । वे भावावेश में आकर स्तब्ध रह जाते हैं । इसी समय उन्हें मन्दिर के टूटे हुए पिछवाड़े से अत्यंत अव्यक्त–सी आवाज रेवा । रेवा ।। राजकुमारी रेवा ।।। सुनाई देती है वे चकित होकर उस अकल्पनीय ,अचिन्त्य , अतर्क्य तथा अमूर्त ध्वनि को सुनते हैं । इसके बाद एक मैन करूण स्वर में रेवा का प्रिय गीत गाती है ---

"शून्य मन्दिर में बनूँगी ,आज मैं प्रतिमा तुम्हारी ।"[1] और
उड़ जाती है तथा उड़ती–उड़ती कहती जाती है --
" रेवा । रेवा ।। राजकुमारी रेवा ।।।" [2]
इस प्रकार नाटक अत्यन्त करूण वातावरण में समाप्त हो जाता है ।

2.2.2 विवेच्य नाटक का मूल्यांकन--

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का "रेवा " प्रकाशन क्रम से द्वितीय नाटक है । यह नाटक

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 177 ।

2 वही, पृष्ठ – 177 ।

ऐतिहासिक प्रसंगों को आधार बनाकर कल्पना के द्वारा लिखा गया है । इस नाटक का नायक है यशोवर्मा और नायिका है रेवा । यह नाटक काम्बोज के राजकुमार यशोवर्मा ,चम्पा साम्राज्य के चम्पाधिपति तथा चोल वंश के चोलराज परान्तिक सम्राटों की कुछ ऐतिहासिक सत्य घटनाओं और काल्पनिक प्रसंग से संबंध रखता है । इसमें हिन्दू सभ्यता के रक्षक एवं कलाप्रेमी शासक के साम्राज्यविस्तार एवं सांस्कृतिक धार्मिक विस्तार की कहानी देखने को मिलती है । यह भारतीय संस्कृति के विदेशों में विस्तार की कहानी है । अतः " रेवा " इतिहासमूलक संस्कृतिप्रधान नाटक की परिधि में आता है ।

विवेच्य नाटक की कथावस्तु शुद्ध ऐतिहासिक नहीं है । इसका आधार ऐतिहासिक आवश्य है । यह नाटककार की दूसरी कृति होने के कारण प्रथम कृति " अशोक " से कुछ परिपक्व एवं प्रौढ़ नजर आती है । नाटक की कथावस्तु जटिल है फिर भी पात्रों की कुशल निर्मिति , संवादों की श्रेष्ठता तथा भाषा की श्रेष्ठता के कारण कथावस्तु में प्रवाहमयता आकर्षकता एवं रोचकता के गुण विद्यमान हैं कथावस्तु अपने निश्चित उद्देश्य की पूर्ति करने में सक्षम है । इस नाटक के आरंभ से ही कौतुहल निर्माण होता है । यशोवर्मा द्वारा चम्पा पर आक्रमण और जीत कथावस्तु को चरमसीमा पर ले जाती है । नाटक का अंत करूण एवं हृदयद्रावक बन पड़ा है ।

" रेवा " के पात्र ऐतिहासिक कथावस्तु के अनुसार , वास्तववादी लगते हैं । चरित्रों में कथावस्तु का विकास करने की पूर्ण क्षमता है । नाटक के संवाद भी चरित्र के अंतर्मन तथा उनके व्यक्तित्व को समझाने में सफल हुए हैं । आत्मकथात्मक तथा नाटकीय भाषा-शैली और साहित्यिक भाषा का प्रयोग कर संवादों में नाटककारने उत्कृष्टता लाने का प्रयत्न किया है । इस नाटक के संवाद, भाषा, ऐतिहासिक वातावरण घटना तथा परिस्थितियों के अनुकूल हैं । संवाद कही-कहीं भाषण जैसे लम्बे बन पड़े हैं । फिर भी ये संवाद दार्शनिक और तर्कयुक्त होने के कारण अश्लाघ्य नहीं लगते। नाटककार ने सांस्कृतिक वातवारण की सृष्टि बहुत ही आदर्श के धरातल पर की है । उन्होंने राजनैतिक सामाजिक तथा धार्मिक वातावरण की निर्मिति बहुत ही सफलता के साथ की है । इस नाटक का उद्देश्य समाज में सांस्कृतिक ,धार्मिक वातावरण में शुद्धता लाना, कला, शिल्प आदि को प्राधान्य देकर राष्ट्र की सांस्कृतिक श्रेष्ठता को देश-विदेश में पहुँचाना तथा शस्त्र की अपेक्षा शास्त्र सदा श्रेष्ठ है । इसे स्पष्ट करना रहा है । साथ ही अहिंसा जैसे तत्त्वों से देश में तथा समाज में सामाजिक सुव्यवस्थ लाना इस नाटक का उद्देश्य है ।

"रेवा " नाटक के चरित्र, भाषा, संवाद अभिनयानुकूल हैं पर यह पाठ्य–नाटक है, इसकी सृष्टि रंगमंच के लिए नहीं हुई थी अतः रंगमंच की दृष्टि से इसके प्रयोग नहीं किए गए । फिर भी आज नाट्यतंत्रज्ञान प्रगति के आधार पर इसका रंगमंचीय प्रयोग सफल हो सकता है । यह ऐतिहासिक कोटि का नाटक पाठ्य–नाट्य के रूप में काफी लोकप्रिय है । इससे भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा कला आदि का ज्ञान हो जाता है ।

निष्कर्ष--

" रेवा " नाटक के अध्ययन के पश्चात मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि ---

1 यह नाटक शुद्ध ऐतिहासिक नहीं है । फिर भी इसका आधार अवश्य ऐतिहासिक है । यह संस्कृतिमूलक ऐतिहासिक नाटक की परिधि में आता है ।

2 इस नाटक की कथावस्तु काम्बोज के युवराज यशोवर्मा, चम्पानरेश तथा चोलवंश के सम्राटों के जीवन की कुछ सत्य घटना से संबंध रखता है । इस नाटक का नायक यशोवर्मा तथा नायिका रेवा है ।

3 इस नाटक में ऐतिहासिक तथा वर्तमानकालीन परिस्थिति का तालमेल बिठाकर आदर्श प्रशासन, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक सुव्यवस्था का चित्रण नाटककारने सफल रीति से किया है ।

4 इस नाटक की कथावस्तु जटिल है फिर भी यह अपने निश्चित उद्देश्य की पूर्ति करने में सफल है । " रेवा " की कथावस्तु आकर्षक है ।

5 " रेवा " के संवाद काफी लम्बे हैं फिर भी ये कथावस्तु में बाधा नहीं डालते बल्कि चरित्र का चित्रण करने में सफल स्दि्ध हुए हैं ।दार्शनिक तथा विचारात्मक संवाद इस नाटक की विशषता है ।

6 देश काल वातावरण में नाटककार सफल सिद्ध हुए हैं । ऐतिहासिक, राजनैतिक , सामाजिक , सांस्कृतिक , धार्मिक वातावरण के परिप्रेक्ष्य में आज की वर्तमान स्थिति के वातवारण की निर्मिति की है ।

7 इस नाटक की भाषा सुस्पष्ट ,सरल, प्रभावी एवं नाटकीय ,ध्वन्यात्मक सारगर्भित एवं भावानुकूल तथा पात्रानुकूल है ।

8 इस नाटक का उद्देश्य भारतीय सांस्कृतिक सभ्यता का प्रचार देश–विदेश में करना तथा भारतीय प्राचीन, धार्मिक, सांस्कृतिक ,कलागत श्रेष्ठता देशवासियों को ज्ञात करना, कला–संस्कृति, सभ्यता का आदर्श प्रस्थापित करना तथा उसका प्रचार–प्रसार करना रहा है ।

9 इस नाटक की पात्र-योजना ,संवाद, भाषा तथा अभिनयानुकूल है । फिर भी इसके रंगमंचीय प्रयोग नहीं हुए हैं क्योंकि ऐतिहासिक घटना, प्रसंगो की रंगमंचीय प्रस्तुति में कठिनाई आ जाती है।असल में इसका निर्माण रंगमंच की दृष्टि से नहीं बल्कि पाठ्य–नाट्य के रूप में हुआ है और इसकी सफलता भी पाठ्य–नाट्य में काफी है ।

2·3 " देव और मानव" -- (अनुपलब्ध)

यह चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का अनुपलब्ध नाटक है । हिंदी नाटक कोश के अंतर्गत इसके बारे में जो जानकारी मिलती है उसी को आधारभूत मानते हुए इसका विवेचन करते हैं --" देव और मानव " (सन 1955, पृ· 153)ले· चंद्रगुप्त विद्यालंकार , प्र·अतरचन्द्र कपूर, दिल्ली, पात्र :पु·7, स्त्री 3, अंक: 5, दृश्य–रहित ।"[1]

2·3·1 कथावस्तु --

" इस पौराणिक नाटक में गौरीशंकर की प्रचलित कथा वर्णित है । प्रजापति दक्ष के दरबार में वसंतोत्सव के समय राजकुमारी पार्वती अपनी सखी तिलोत्तमा के साथ विद्यमान है । नगर कन्याएँ तथा राज–नर्तकी महाराज के सामने निकलकर गीत गाती हैं । नृत्य समाप्त होने पर त्रिशूलधारी शिव प्रवेश करते हैं । शिव की दृष्टि सती पर पड़ती है । वह सहसा आह्लाद से भरकर डमरू बजाते हैं । दूसरे अंक में देवों की राजधानी कैलाशपूरी में वरूण ,सोम, अग्नि , अंगिरस, प्रद्युम्न, बृहस्पति, सूर्य के वार्तालाप के समय महाराज शिव और चित्रांगदा का प्रवेश होता है । थोड़ी देर में प्रजापति दक्ष का दूत आता है । चित्रांगदा और शिव का नृत्य होता है । नृत्य के उपरान्त चित्रांगदा शिव से दक्ष–कन्या के विवाह के बारे में निर्णय पूछती है । शिव कहते हैं कि सती एक शक्ति है जो देव और मानव के

---

1 डॉ· दशरथ ओझा – हिंदी नाटक कोश, पृष्ठ – 226 ।

बीच की खाई पाट सकती है ।

तीसरे अंक में सती के मामा पांचालेश्वर और दक्ष का वार्तालाप है । पांचालेश्वर शिव के साथ सती के विवाह का विरोध करते हैं, किन्तु दक्ष सती का विवाह शिव के सथ कर देते हैं । वहाँ से लौटकर शिव–सती कैलाशपुरी के राजकीय उद्यान में आकर वरूण, अग्नि , वृषभ , सोम, सूर्य आदि देवों से कहते हैं --" मानव जाति के सबसे श्रेष्ठ रत्न(सती) से मेरे विवाह का उद्देश्य ही यह है कि मैं मानव और देव की कला और संस्कृति के संमिश्रण से एक उच्चतम् संस्कृति का निर्माण कर सकूँ ।"

पाँचवें अंक में कनखल में अग्निष्टोम यज्ञ होता है । उस यज्ञ में शिव और सती संम्मिलित नहीं हैं । दक्ष ने उन्हें निमंत्रण नहीं दिया था तो भी सती अस्त–व्यस्त रूप से यज्ञ में पहुँच जाती है और चीत्कार करती है । दक्ष सती की भर्त्सना करते हैं ।यज्ञ कार्य के मध्य में ही डमरू बजाते शिव भी पहुँच जाते हैं । दक्ष उनकी भी भर्त्सना करते हैं । क्रोधित शिव अपना संहारकर्ता रूप दिखलाते हैं । सती धधकती हुई ज्वाला में कूद पड़ती है । तभी चारों ओर एक ध्वनि सुनाई पड़ती है " सती–सती–सती ।'

अभिनय – पंजाब ड्रामा लीग द्वारा लाहौर में अभिनीत ।"[1]

2.3.2 विवेच्य नाटक का मूल्यांकन --

चंद्रगुप्त जी का यह तीसरा नाटक है जो अनुपलब्ध है । नाटक कोश में प्राप्त जानकारी के अनुसार "देव और मानव " नाटक रंगमंच की दृष्टि से सफल है । पंजाब ड्राम लीगद्वारा लाहौर अभिनीत इस नाटक का रंगमंचीय प्रयोग सफल हुआ है । विद्यालंकार जी ने इस नाटक की निर्मिति रंगमंच की दृष्टि से की है ।

इस नाटक का मूल विषय पौराणिक कथा पर आधारित है । शिव–सती की पौराणिक कहानी को मध्यनजर रखते हुए इस नाटक की सृष्टि की गई है । इसमें शिव और सती के विवाह की कहानी विद्यमान है ।इस नाटक का उद्देश्य प्राचीन संस्कृति के आधार पर एक नवीनतम तथा उच्च संस्कृति का निर्माण करना रहा है । इसके साथ ही कला, संस्कृति और सभ्यता का दर्शन करना रहा है ।

---

1 डॉ. दशरथ ओझा – हिंदी नाटक कोश, पृष्ठ – 226–27 ।

निष्कर्ष --

" देव और मानव " की उपलब्ध कथा पर आधारित इस नाटक के संदर्भ में निम्न निष्कर्ष निकलते हैं ।

1 इस नाटक की कथावस्तु पौराणिक कथा पर आधारित है ।

2 इस नाटक की कथावस्तु पौराणिक पात्र शिव तथा सती की घटनाओं से संबंध रखती है।

3 इस नाटक के बहुतांश पात्र पौराणिक हैं ।

4 यह नाटक पौराणिक नाटक की कोटि में आता है ।

5 इस नाटक के संवाद तथा भाषा-शैली आकर्षक है ।

6 वातावरण निर्मिति में नाटककार को सफलता मेली है ।

7 अभिनय की दृष्टि से तथा रंगमंच की दृष्टि से यह नाटक काफी हद तक सफल है ।

8 इस नाटक का उद्देश्य आदर्श संस्कृति का निर्माण तथा प्राचीन संस्कृति का आधुनिक सभ्यता के लोगों को दर्शन कराना रहा है ।

2.4 **" न्याय की रात"----**

चंद्रगुप्त विद्यालंकार द्वारा लिखित " न्याय की रात " नाटक सन 1959 में प्रकाशित राजनीतिक घटना पर आधारित लिखा गया सामाजिक नाटक है । यह नाटक वर्तमान समाज तथा शासनव्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार का चित्र प्रस्तुत करता है । स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में पायी जानेवाली रिश्वतखोरी, सिफारिशबाजी, भ्रष्टाचार आदि पर उन्होंने करारा व्यंग्य किया है । इसके साथ ही इसमें भ्रष्टाचार का उन्मूलन और गहरी भावनात्मक एकता से होनेवाले लाभों को भी प्रदर्शित किया है ।

" न्याय की रात " के जरिए नाटककारने देश के दुश्मन बने हमारे नेताओं तथा बड़े-बड़े सरकारी अफसरों की पोल खोल दी है । इसमें लेखक ने समाज, धर्म तथा लोक-सेवा का नकाब

पहने हुए दुहरे व्यक्तित्व के नेता और अफसर जिन्हें यह भोली-भाली जनता रक्षक मानती है, मान-सम्मान देती है,का असली रूप प्रस्तुत किया है । जिनके कंधों पर हमारे समाज की इमारत खड़ी है वे ही ढोंगी हैं, पाखण्डी हैं और लोगों को गलत राह पर ले जा रहें हैं । इसी कारण समाज और देश का विकास ठप्प होता चला जा रहा है। इसी रहस्यभेद को इसमें नाटककारने उजागर किया है ।

इस नाटक का प्रधान पात्र हेमन्त पाखण्डी समाज सेवक का रूप धारण कर समाज में भ्रष्टाचार फैला रहा है । वह स्वयं भ्रष्टाचारी है । वह भ्रष्टाचार का हिमनग है । इसे ही उखाड़कर फेंक देने का काम ईमानदारी पुलिस अफसर राजीव कर देता है ।

2.4.1 **कथावस्तु--**

" न्याय की रात " का प्रधान पुरूष पात्र हेमंत है । सारी कथा उसके इर्द-गिर्द घूमती है। कथा उससे शुरू होती है और अंत उसकी मौत से होता है । हेमंत सुशिक्षित, पढ़ा-लिखा नौजवान है।दुनियादारी का उसे काफी अनुभव है । वह अनेक सामाजिक,संस्थाओं को चला रहा है । इन संस्थाओं के महत्त्वपूर्ण पदों की जिम्मेदारियाँ वह निभा रहा है । इनसबका उद्देश्य इनके जरिए अपना उल्लू सीधा करना ही रहा है ।

बहनोई राजीव उन्हें काम के संबंध में पूछता है तो वह जवाब देता है कि मैं समाज का अदना-सा सेवक हूँ । सारी दुनिया के काम मेरे काम हैं । नगर की कितनी ही संस्थाएँ हर समय किसी-न-किसी मसलेपर मुझसे सलाह माँगती रहती हैं । जिस किसी का काम अटकता है मेरे पास चला आता है । हेमंत अपने बहनोई पर रौब गालिब करना चाहता है । जब वह पकड़ा जाता है तो कहता है --" यह दुनिया एक नाटक ही तो है, भाईसाहब । मैं अपनेपार्ट में जरा ओवर ऐक्टिंग कर गया । बस मेरा अपराध इतना ही है ।"[1] किन्तु राजीव इससे सहमत नहीं है वह जीवन को एक बड़ी और महत्त्वपूर्ण वास्तविकता समझता है ।

हेमंत मानव कामजोरियों से अधिकतम् लाभ उठानेवाला पाखंड़ी समाज सेवक है किन्तु सामाजिक संस्थाओं का संचालक होने के नाते समाज में उसे काफी प्रतिष्ठा मिली है । बहुत दूर-दूर तक उसकी पहुँच है । हेमंत आदर्श समाज सेवक का नकाब धारण कर जी रहा है किन्तु उसका

----

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 39 ।

वास्तविक रूप कुछ अलग ही है ।इसके संबंध में स्वयं हेमंत के शब्दों में देखिए --" एक दिन आपने मुझसे पूछा था कि मेरा पेशा क्या है ? आज मैं इसका जवाब देता हूँ । मेरा पेशा है, बेइमान व्यक्तियों के लिए परमिटों का इंतजाम करना, बेइमान और लालची व्यवसायपतियों को बड़े-बड़े ठेके दिलवाना और यह सब मैं कर पाता हूँ , ऊँचे ओहदोंपर विद्यमानकुछ बेइमान और विश्वासघाती सरकारी अफसरों की सहायता से ।"[1]

हेमंत तिकड़मबाज " बिजनेसमन" है जो सरकारी अफसरों की कमजोरियों का फायदा उठाकर, उन्हें लालच में फँसाकर अपना काम निकाला करता था । लाखों रूपए वह खुद कमाता था और हजारों अफसरों को खिलाता था । इस कुकर्म का उसको अन्तरात्मा विरोध नहीं करती थी ।क्योंकि उसका दृष्टिकोण है कि आज की दुनिया में ईमानदारी का जीवन बिताना मुश्किल है ।क्योंकि वह देख रहा था कि आजाद भारत में सब जगह बेइमानी और भ्रष्टाचार का राज है । हेमंत बेइमानी और भ्रष्टाचार का प्रतीक पात्र है ।उसने अपने इस काम में अनेक ऊँचे-ऊँचे सरकारी अफसरों को शामिल किया है । इसमें उसका साथ सदानन्द नामक ऊँचा अफसर देता है ।

हेमंत स्वयं को शक्ति का पुजारी मानता है । उसका कहना है कि यह दुनिया कमजोरों के लिए नहीं है ।दया, ममता करूणा ये सब कमजोरियाँ हैं । वह शक्ति की स्थिति प्रमाण और निंरतरता के लिए हिंसा और अपहरण को अपरिहार्य मानता है ।

हेमंत की एक तम्बाकु की कंपनी होती है । वह उस कंपनी के नाम पर लाखो रूपए हड़प करता है, बड़े-बड़े व्यापारियों को फँसाता है । बड़े-बड़े ठेके लेकर काफी धन इकट्ठा करता है । उसका सारा काम कानूनके खिलाफ रहता है और फिर भी अपनी बहन उमा से कहता है कि चिन्ता मत करना मेरा काम कभी कानून की सीमा से बाहर नहीं होता ।

हेमंत समाज सेवक होने के कारण अनेक लोग उसके पास अपनी विभिन्न समस्याएँ लेकर आते हैं ।कोई नौकरी के निमित्त आता है तो कोई किसी अन्य कारण से । किन्तु हेमंत उनकी कमजोरियों का अनुचित लाभ उठाकर अपने स्वार्थ की पूर्ति करता है ।

एक दिन अनाथ, असहाय, शरणार्थी कमला नाम की लड़की उसके पास नौकरी के निमित्त

---

1 चंद्रगुप्त वेद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 114 ।

आती है तब हेमंत उससे सारी जानकारीपाकर उसे सदानन्द के दप्तर में निजी सहायक के रूप में नौकरी दिलवाता है । असल में वह सदानन्द को कमला के रूप में रिश्वत ही दे देता है । सदानन्द को खुश रखकर वह अपना पेट भरना चाहता है । ऐसे कितने ही लड़कियों को उसने रिश्वत के रूप में अफसरों को दिया है ।

हेमंत और सदानन्द मिलकर काफी बेइमानी करते हैं । हेमंत सदानन्द की मदद से झूठे करारनामे करता है, झूठे परमिट बेचता है । कंपनी के नाम पर झूठे रजिस्टर खोलता है और लाखों का मुनाफा प्राप्त करता है ।हेमंत ने सदानंद जैसे अनेक ऊँचे सरकारी अफसरों को पूरी तरह से अपने जाल नें फँसा लिया है ।सदानंद की लड़कियों के प्रति एक गलत धारणा है । वह मानता है कि सब लड़कियाँ निकम्मी होती हैं मर्दों के मुकाबले में आधा काम भी नहीं करती । पर हेमंत उसे समझाता है कि लड़कियों के बिना आपका काम नहीं चलेगा । सदानंद हेमंत की बात मान जाता है । इसी कारण वह कमला को अपनी निजी सहायक के रूप में काम पर रखता है ।

आगे चलकर इसी सदानंद के दप्तर में जुगलकिशोर नामक एक पढ़ा-लिखा युवक आता है। इसे नौकरी के लिए युनियन पब्लिक सर्विस कमिशन ने चुन लिया है । उसे उस प्रकार का पत्र भी दिया गया है । इस पत्र के अनुसार जुगलकिशोर सदानंद के दप्तर में मिलने आता है । सदानंद के दप्तर में उसकी कोई खबर तक नहीं लेता । दप्तर का कोई भी अधिकारी उसका काम करने के लिए तैयार नहीं है । हर अधिकारी उसे टालता ही रहता है । सब कामचोर हैं । हर एक सरकारी अधिकारी अपनी जिम्मेदारी से दूर भाग रहा है । अतः हार कर जुगलकिशोर सदानंद के पास आता है अपनी बात सदानंद के पास रखता है पर सदानंद भी उसे टालने की कोशिश करता है । इसके पीछे सदानंद का स्वार्थ ही है क्योंकि वह जुगलकिशोर की जगह अपने पहचान वाले लड़के विजय राघव को देना चाहता है ।

जुगलकिशोर सदानंद से बिनती करता है " मैं आपके पास न्याय की माँग करने आया हूँ श्रीमान । मुझे मालूम हुआ है कि यहाँ इसी पोस्ट के लिए किसी ऐसे व्यक्ति को बुलाया जा रहा है जिसे कमीशन ने नहीं चुना था ।बल्कि वह कमीशन के सामने गया तक भी नहीं था ।"[1] सदान्द गुस्से में आकर उसे दस दिन बाद में आओ कहकर वापस भेजता है किन्तु जैसे ही जुगलकिशोर चला जाता है श्री. व्यंकटाचारी का सदानंद को जुगलकिशोर के बारे में फोन आता है तो सदानंद

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ – 73–74 ।

घबराकर उसे तुरन्त वापस बुला लेता है और पूछता है कि तुमने पहले क्यों नहीं बताया तुम श्री.व्यंकटाचारी के आदमी हो ? सदानंद उसी वक्त जुगलकिशोर को नौकरी का ऑर्डर देता है और कहता है --" रामनाम की महिमा सुनी है न तुमने ? इस कलिकाल में वह शक्ति परमात्मा के बनाए कुछ बन्दो के नामों में आ गई है । फर्क इतना ही है कि रामनाम की महिमा युगों तक चली ,इन बन्दो की ताकत सिर्फ तब तक रहती है जब तक ये कुर्सी पर रहते हैं । आज इस बात का ज्ञान रखना जरूरी है कि किस मौके पर कौनसा नाम अमोघ सिद्ध होता है ।"[1] मतलब यह कि आजकल सरकारी कार्यालयों में भी नौकरी योग्यता के कारण नहीं सिफारिश के बल पर मिलती है । यहाँ बात जुगलकिशोर कमला के सामने रखता है । जुगलकिशोर कमला से कुछ साल ही बड़ा है और उसका हितचिंतक है । कमला भी जुगलकिशोर को पसंद करती है ।

जुगलकिशोर कमला को समझाता है कि आज का समाज गन्दगी से भरा हुआ है । सब जगह खुशामद , पक्षपात और तिकड़मबाजी का दौर है । योग्यों की कोई कदर नहीं करता तिकड़मबाज अत्यन्त अयोग्य होते हुए भी तरक्की पाते चले जाते हैं । यहाँ देश की चिन्ता किसी को नहीं है ।

सदानंद पक्का बदमाश है । वह शुरू-शुरू में कमला पर डोरे डालता है । वह समझता है कि उस पर कुछ एहसान कर लिया तो बदले में वह मेरी छोटी-मोटी ज्यादतियाँ भी सहन करेगी और धीरे-धीरे वह अपने को समर्पित करेगी । पर कमला सबसे भिन्न लड़की है । उसे सदानंद पर पूरा भरोसा है । वह सदानंद को पितृतुल्य मानती है । कमला का उन पर इतना अगाध विश्वास देखकर आखिर सदानंद का हृदयपरिवर्तन हो जाता है ।

इधर हेमंत की तम्बाकु कंपनीवाला केस एकाएक बहुत पेचीदा बन जाता है । उसकी यह कंपनी शुरू से ही पेचीदा है । जब वह कानून की पकड़ में आ जाती है तब हेमंत राजीव की आड़ लेकर उससे बचना चाहता है मगर राजीव उनका कोई साथ नहीं देता । तब वह इस फर्जी कंपनी की सेक्रेटरी के रूप में कमला की नियुक्ति कर उसे फसाना चाहता है । तब सदानंद हेमंत की इस नई चाल पर आपत्ति प्रकट करते हुए कहता है कि तेइस साल की लड़की तुम्हारी इस चालबाज तम्बाकु कंपनी की सेक्रेटरी थी इस बात पर कौन भलामानस विश्वास करेगा ? तब हेमंत बड़ी चालबाजी से

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 76 ।

जवाब देता है –" कोई विश्वास करें या न करे – इससे हमारा क्या आता जाता है । हमें तो सिर्फ कानून का पेट भरना है । बस इसके इधर उधर क्या हो रहा है यह सब जानना हमारे लिए निरर्थक है । और फिर आज की दुनिया को तो कोई चौकानेवाली खबर चाहिए । अस्वाभाविक और अजीब लगनेवाली बातों पर दुनिया और भी जल्दी विश्वास करती है ।"[1] सदानंद इस बात के लिए तैयार नहीं है ।वह कमला को फँसाना नहीं चाहता पर हेमंत उन्हें जेल का डर दिखाता है । इस कंपनी की छान बीन में हेमंत के बाद उसे भी दोषी ठहराया जाकर जेल हो सकती थी ।मजबूरन सदानंद हेमंत का लोहा मान जाता है ।

हेमंत की शैतानी योजना के अनुसार नौ महीने पहले की तारीख डालकर तम्बाकु कंपनी की ओर से 1000– रूपये मासिक वेतन पर कमला को कंपनी सेक्रेटरी का नियुक्ति पत्र देकर और तीन महिने पहले की तारीख डालकर कंपनी की सेक्रेटरीशिप से उसका त्यागपत्र हस्ताक्षर सहित लिया जाता है ।उन्हें छः महीने का वेतन रूपये 6000– और कार खरीदने के लिए 4000– रूपए उधार दिये जाते हैं । कमला पैसे लेने से इन्कार कर देती है पर सदानंद के अनुरोध पर लेकर रिफ्युजी स्कूल को दान स्वरूप दे देती है । इसका सदानंद पर भारी असर पड़ जाता है । उसका हृदय पूरी तरह परिवर्तित होता है ।

हेमंत ने कमला को तम्बाकु कंपनो का सेक्रेटरी बनाकर और उनसे त्यागपत्र लेकर की गई जालसाजी कंपनी की बेइमानियाँ उनके उपर डालने की तरकिब है ।

इधर एक रात इन्सपेक्टर अमरसिंह हेमंत को खबर देता है कि उसके विरूद्ध पुलिस को इतने प्रमाण मिल गए हैं कि कल सुबह सूर्य निकलने से पहले ही पुलिस उसे गिरप्तार कर लेगी । हेमंत राजीव को फोन करता है । हेमंत बिगड़ी हुई बाजी एक ही रात में फिर से जीतने के लिए कोई चक्कर चलाना चाहता है । जब राजीव हेमंत से मिलने आता है तो वह अपराध स्वीकृति का बहाना बनाता है । राजीव हेमंत की करतुतें जानते हुए भी अनजान बनकर रह जाता है और कहता है मजाक मत कीजिए भाई साबह । आप तो हमारे समाज के लीड़रों में हैं जिनके कंधो पर हमारा समाज टिका हुआ है । हेमंत समझ जाता है कि राजीव उन्हें अच्छा आदमी समझ रहा है तब वह एक चक्कर चलाता है और सदानंद के विरूद्ध सब प्रमाण राजीव को देता है । वह राजीव को रजिस्टर भी देने

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ – 93 ।

का वादा करता है जिसमें बेइमान सरकारी अफसरों के अनेक तथ्य अंकित हैं । राजीव जानता है कि हेमंत अपनी सफाई पेश कर अपनी जगह सदानंद को दोषी ठहरा रहा है । वह उनसे काले धंधे रोकने के लिए कहता है --" आप लोगों की यही मेहरबानी होगी कि तरह-तरह के अवैध और गुप-छिप कर किए गए कामों से देश की उन्नति के मार्ग में बाधाएँ न पहुँचाए ।"[1] राजीव उन्हें फटकार कर चला जाता है ।

हेमंत इस परिस्थिति से सुरक्षित बच निकलने के लिए अनेक चक्रव्यूह रचता है । उसका निजी सहायक मुंशी देवराज उसके साथ है । मगर अपने बनाए जाल में वह स्वयं ही फँसता चला जा रहा है । हेमंत चालबाज और जालसाज आदमी है । उसके जीवन की सबसे बड़ी ट्रैजेड़ी यह है कि आगे चलकर वह खुद अपना सबसे बड़ा दुश्मन बन जाता है । अपने बनाए चक्रव्यूह में वह इतना अधिक फँस जाता है कि समझते-बूझते भी उससे निकल नहीं पाता ।

हेमंत को पता चल जाता हे कि राजीव सरकारी पुलिस अफसर है । वह होम मिनिस्टरी का सब से बड़ा खुफिया अफसर है । हेमंत एक और चाल चलता है । एक ओर तो उसने कमला को जालसाच पेचीदा तम्बाकु कंपनी की सेक्रेटरीशिप दी थी ।बाद में निवृत्ति पत्र भी लिया था । जिन दिनों कंपनी ने बहुत बड़ी बेइमानियाँ की थी उस समय कमला ही सेक्रेटरी थी यह उसने साबित किया ही है । अब कमला ही न रहे तो सब मामला खत्म हो जाता है ।वह कमला की हत्या करके आत्महत्या साबित करने की साजिश रचता है ।

हेमंत उसी रात सदानंद को फोन करता है ।उसे जरूरी काम है कहकर अपने घर बुलाता है ।उसे झूठ बताता है कि आपके विरूद्ध पुलिस को काफी प्रमाण मिले है और पुलिस कल सुबह सूर्योदय से पूर्व ही आपको गिरफ्तार करनेवाली है । सदानन्द डर के मारे उस पर विश्वास कर लेता है हेमंत उसे इससे बच निकलने के लिए एक उपाय बताता है कि इस भ्रष्टाचार का जिम्मेदार कमला को ठहराया जाय । सदानंद इसके लिए तैयार नहीं है तो हेमंत उसे बताता है कि आज ही पुलिस मेरे घर छापा मारकर सब महत्त्वपूर्ण कागजाद ले गई है । तब सदानंद घबराकर मजबूरन हेमंत जैसा कहता है उस प्रकार करने को तैयार होता है । हेमंत कमला को चालबाज ,भ्रष्टाचारी और बेइमान

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात, पृष्ठ - 119 ।

नारी साबित करने वाले प्रमाणपत्र पर सदानंद के हस्ताक्षर लेता है ।

सदानंद के चले जाने पर वह तुरन्त कमला को फोन करता है । उसे सदानंद संकट में है जल्दी आओ कहकर घर बुलाता है । जब कमला रात में ही हेमंत के घर पहुँच जाती है तब हेमंत उसे आत्महत्या के कागजाद तैयार करने के लिए डराता धमकाता है ताकि कमला की हत्या नहीं बल्कि आत्महत्या साबित हो । हेमंत उसे सदानंद के किए गए हस्ताक्षर का वह पत्र भी दिखाता है जिसके जरिए उसने कमला को चालबाज और जालसाज नारी सिद्ध किया था । परन्तु कमला उस पत्र पर विश्वास नहीं करती । वह हेमंत से फटकारकर कहती है कि यह सदानंद की भाषा कदापि नहीं हो सकती, जरूर यह कोई आपकी जालसाजी मालूम पड़ती है ।

हेमंत कमला के आत्महत्या पत्र तैयार करने से इन्कार कर देने पर पिस्तौल दिखाकर हत्या करने की धमकी देता है तब वह कहती है "मैं मौत से उतनी नहीं डरती जितनी तुम लोगों से डरती हूँ .... मैंने उन हत्यारों को देखा है जिन्होंने मेरी आखों के सामने मेरे माता-पिता की हत्या की थी पर तुम लोग तो उन हत्यारों से भी बड़े हत्यारे हो ।"[1]

इधर राजीव के कार्यालय में हेमंत के टेलीफोन पर होनेवाली सभी बातें रिकार्ड की जा रहीं थीं । हेमंत के सब टेलीफोन उन्होंने सुने थे । हेमंत राजीव के सामने कितना ही देशप्रेमी-देशसेवक होने का नाटक करता रहें , देशहित के लिए किए गए त्योगों के पुल बँधाता रहें, ,, राजीव उनके प्रत्येक कुकर्म से वाकिफ था । इसलिए वह हेमंत के हर कार्य पर नजर रखता है । वह उस रात ठीक समय पर हेमंत के घर पहुँच जाता है जहाँ हेमंत कमला की हत्या करके आत्महत्या साबित करने का प्रयत्न कर रहा था । राजीव के आने से उसका सब खेल समाप्त हो जाता है । वह हेमंत से आत्मसमर्पण करने के लिए कहता है मगर हेमंत आत्मसमर्पण करने के लिए तैयार नहीं होता । वह स्वयं गोली चलाकर आत्महत्या करता है । यहाँ नाटककारने राजीव के द्वारा काली शक्ति को परास्त कर दिया । यहीं पर नाटक समाप्त हो जाता है

2.4.2 विवेच्य नाटक का मूल्यांकन--

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का " न्याय की रात " अंतिम और सर्वश्रेष्ठ सफल नाटक है । यह नाटक राजनीतिक तथा सामाजिक समस्या को मध्यनजर रखते हुए लिखा है ।इस नाटक का नायक है हेमंत तथा प्रधान पात्र के रूप में कमला इस नाटक की नायिका है । यह नाटक स्वतंत्र्योत्तर भारतीय

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 143 ।

राजनीतिक और सामाजिक परिवेश का वास्तव चित्रण करता है । भारत की अनेक समस्याओं को इस नाटक में उजागर किया है ।इसमें प्रमुख रूप से भ्रष्टाचार तथा नीतिमूल्यों की गिरावटमेंआदर्श प्रशासन एवं सामाजिक सुव्यवस्था का संकेत दिया है । पाखण्डी हेमंत समाज सेवक का नकाब ओढ़कर समाज का शोषण करता रहता है । इसका साथ सदानंद जैसा उँचा अफसर दे देता है । यह भ्रष्ट सदानंद पूरे भारत में फैला है । ऐसी अन्यायी दूषित राजनीति तथा सामाजिक परिवेश के खिलाफ उठी एक चिनगारी तथा न्याय दिलाने वाली व्यवस्था की प्रतिष्ठापना का जिवंत दर्शन इस नाटक के जरिए हो जाता है । " न्याय की रात " यह दूषित ,काली आन्यायी राजनीति में न्याय दिलानेवाली एक प्रकाश किरण है जो सामाजिक व्यवस्था का संकेत देती है ।

विवेच्य नाटक की कथावस्तु आरंभ से ही कौतुहल निर्माण करती है ।यह कथावस्तु आधुनिक परिवेश से जुड़ी होने के कारण इसके पात्र सुशिक्षित हैं । कथावस्तु का गठन बहुत सोच समझकर किया है । कथावस्तु में रोचकता , आकर्षकता एवं प्रभावात्मकता आदि गुण देखने को मिलते हैं । कथानक का आरंभ भी आकर्षक बना है । हेमंत के भ्रष्टाचार का हिमालय खड़ा कर देना तथा उससे सुरक्षित बच निकलने के लिए साजिश रचना यहीं इस नाटक की चरमसीमा है । नाटक के अंत में सत्य तथा न्याय की विजय दिखाई है । इस नाटक के पात्र आधुनिक एवं सुशिक्षित हैं इसी कारण इनकी भाषा पर अंग्रेजी का काफी प्रभाव है । चरित्रांकन करते समय उनकी नाटकीय सामर्थ्य की क्षमता पर नाटककारने काफी ध्यान दिया है । चरित्र महत्त्वाकांक्षी तथा आदर्शवादी आदि कोटि के हैं । नाटक के संवाद छोटे,चुटीले, रोचक एवं पात्रानुकूल तथा भावानुकूल बन पड़े हैं । आत्मकथात्मक, नाटकीय और कथाविकास के पूरक संवादों की सृष्टि इस नाटक की विशेषता है । नाटककारने आधुनिक राजनीति के षड्यंत्रमय विकराल वातावरण की निर्मिति की है जिसमें वे खूब सफल सिद्ध हुए हैं ।

इस नाटक का उद्देश्य दूषित शासनयंत्रणा , कूटनीतिज्ञ ,षडयंत्रकारी, राजनीतिज्ञो तथा सरकारी अफसरों के कारनामों का पर्दाफाश कर समाज में , शासनव्यवस्था में मजबूती लाने का रहा है तात्पर्य इस नाटक का उद्देश्य स्वतंत्र भारत से भ्रष्टाचार का उन्मूलन तथा देश में गहरी भावनात्मक एकता का प्रसार है ।

"न्याय की रात " सभी दृष्टि से सफल एवं लोकप्रिय है । इसके पात्रों की निर्मिति, भाषाशैली, संवाद तथा वातावरण निर्मिति अभिनयानुकूल है । रंगमंच पर यह नाटक बेहद सफलता

पाता है । श्री. सोंधी के निर्देशन में इसका रंगमंचीय प्रयोग हुआ था जो काफी सफल रहा । तात्पर्य रंगमंच की दृष्टि से यह नाटक सफल है ।

निष्कर्ष--

" न्याय की रात " के अध्ययन के पश्चात मैं इस निष्कर्ष तक पहुँचा हूँ कि ---

1 यह नाटक आधुनिक ,सामाजिक तथा राजनैतिक परिवेश को मध्यनजर रखते हुए लिखा है। यह नाटक राजनीतिक तथा सामाजिक नाटक को कोटि में आता है ।इसके सभी घटना-प्रसंग वर्तमान से संबंधीत हैं ।

2 इस नाटक का नायक हेमंत है । उसी के इर्दगिर्द नाटक की कथावस्तु घूमती नजर आती है तथा प्रमुख स्त्री पात्र और नायिका के रूप में कमला सामने आती है ।

3 इस नाटक की कथावस्तु आधुनिक काल से संबंध रखती है तथा सामाजिक समस्या को आधार मानकर अपने उद्देश्य की पूर्ति करती है । कथावस्तु सहज और प्रवाहमयी है ।

4 इस नाटक में आदर्शवादी पात्रों के जरिए अन्याय के खिलाफ जिहाद छेड़ा है जिसमें वे सफल हुए हैं । " न्याय की रात " दूषित काली राजनीति ,समाजनीति में प्रकाश की किरण दिखाता है ।

5 इस नाटक के संवाद छोटे, स्पष्ट, सरल, आकर्षक पात्रानुकूल एवं भावानुकूल बन पड़े हैं। संवादों के जरिए पात्रों के चरित्र का उद्घाटन करने में नाटककार सफल हुए हैं ।

6 इस नाटक की भाषा पात्रानुकूल आधुनिक है। भाषा में स्पष्टता एवं आकर्षकता के गुण विद्यमान हैं। नाटकीय शैलीका प्रयोग इस नाटक में हुआ है ।

7 देशकाल वातावरण की दृष्टि से यह नाटक सफल है । आधुनिक राजनीतिक ,सामाजिक परिवेश का जीता-जागता चित्र इसमें देखने को मिलता है ।

8 इस नाटक का उद्देश्य समाज में स्थित भ्रष्टाचार , नीतिमूल्यों में आई गिरावट,अमानवीयता, षड़्यंत्र का पर्दाफाश करना, आदर्श समाज, शासन व्यवस्था की पूर्ति करना तथा देश में गहरी भावनात्मक एकता का निर्माण करना रहा है ।

9 " न्याय की रात " अभिनय और रंगमंच की दृष्टि से पूर्णतः सफलतम् नाटक है । इसका निर्माण रंगमंच की दृष्टि से किया गया है । इसके पात्र, संवाद, भाषा, देशकालवातावरण अभिनयानुकूल हैं । रंगमंचीय प्रस्तुति में श्री सोंधि के निर्देशन में लाहौर के ओपन एअर थिएटर में इसका पहला प्रयोग हुआ जो काफी सफल रहा । रंगमंच की दृष्टि से यह नाटक बेहद सफल है ।

निष्कर्ष-----

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी एक संवेदनशील लेखक है । उन्होंने गुलाम भारत और आजाद भारत की परिस्थितियों को पहचाना था । भारत के राष्ट्रवादी नागरिक होने के कारण उन्होंने आजाद भारत का सपना देखा था । पर वे इस पर संतुष्ट नहीं थे । वे भारत का नवनिर्माण करने की चाह रखनेवालों में से एक थे ।

विद्यालंकार जी जानते थे कि भौगोलिक दृष्टि से अखंड और विशाल भारत अनेक टुकडो में विभाजित होकर बार-बार गुलाम क्यो बना ? उनकी संवेदना है कि भारत के लंबे इतिहास में उन्हें एकता का तत्त्व कहीं भी नजर नहीं आया । आपसी फूट , लड़ाई बार-बार भारत को गुलाम बनाती आयी । इसलिए आवश्यक है कि भारत में राष्ट्रीय एकात्मता का निर्माण हो । यहीं संवेदना उनके नाटकों में दिखाई देती है । " अशोक " में तक्षशिला का विद्रोह और " रेवा " में काम्बोज की अंतरिक गड़बड़ी (कृष्णवर्मा द्वारा अन्याय से राज्य का अपहरण) इसी बात का प्रमाण है ।

विद्यालंकार जी अपने नाटकों के माध्यम से यहीं कहना चाहते हैं कि संपूर्ण भारत पहले एक हो। उसके नागरिक सभ्य और सुसंस्कृत हो । शासन व्यवस्था मजबूत हो और अखंड़ देश अपना सर्वोन्मुखी विकास करें । राष्ट्रीय नवनिर्माण की ओर शासक और नागरिकों का ध्यान आकर्षित करते हैं उनका मानना था कि भावात्मक एकता, समानता, शान्ति को स्थापना , अहिंसा देशप्रेम त्याग सेवाभाव और मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने का प्रयत्न जैसी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाय तो भारत अपना विकास कर सकता है । विद्यालंकारजी के नाटकों के पात्र अधिकतम् इन्हीं भावनाओं से ओतप्रोत हैं ।

विकासोन्मुखी भारतवासियों के लिए यह जरूरी नहीं है कि धर्म,भाषा,प्रान्त के नाम पर

लड़ते–झगड़ते रहें, हड़ताल ,आन्दोलन ,अहिंसा अपहरण करते फिरे ।उन्होंने अपने नाटकों में शासकीय अधिकारियों तथा नागरिकों के कर्तव्यों को स्पष्ट कर दिया है । आदर्शवादी पात्रों के जरिए वे स्पष्ट कर देते हैं कि सत्ता और राजनीतिक शक्तियाँ संघर्ष के लिए नहीं हैं बल्कि जनता और देश के कल्याणकारी कार्य में लगा देने के लिए हैं । सम्राट अशोक के हृदयपरिवर्तन के बाद की शासन व्यवस्था तथा सम्राट यशोवर्मा के साम्राज्य स्थाप्न के बाद कल्याणकारी कार्य में जूट जाने की घटना इसी बात का प्रमाण है ।

ऋषि पुण्ड्रीक तथा आचार्य उपगुप्त द्वारा नैतिक शिक्षा और शिक्षासंबंधी व्यवस्था के कर्तव्य को स्पष्ट कर दिया है । विद्यालंकार जी भारतीय नागरिकों की बदली हुई मानसिकता और हृदयहीनता पर भावात्मकता के जरिए हृदयपरिवर्तन करना चाहते हैं बदले की भावना से नहीं । भाभी शीला का हृदयपरिवर्तन, सम्राट अशोक और भ्रष्ट सदानंद का हृदयपरिवर्तन इसी बात का प्रमाण है । निष्कर्ष यह कि आज की बदलती परिस्थितियों में टूट रहे मूल्यों को देखकर सांस्कृतिक , राजनीतिक , सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों की संवेदना जगाने की कोशिश विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों के माध्यम से की हैं।